Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोषण के लिये

विटामिन और खनिज

55.6
220:6

डॉ. कृष्णकुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

२२०:८
87182
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

Call No. २२०:८
AUTHOR
Acc. No. 87182

गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय
कृपया पुस्तक के ऊपर कोई निशान आदि न लगायें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

61686

पुस्तकालय

गुरूकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

वर्ग संख्या .... आगत संख्या 87182

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30 वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए अन्यथा 50 पैसे प्रति दिन के हिसाब से विलम्ब दण्ड लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

87189
पुस्तकालय
पुस्तकालय
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

पोषण के लिये

विटामिन और खनिज

डॉ० कृष्णकुमार आयुर्वेदालङ्कार
एम० ए०, साहित्याचार्य,
पी-एच. डी., डी. लिट्.

प्रकाशक :
मयंक प्रकाशन
भूषण भवन, मण्डी बांस, मुरादाबाद

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रकाशक :

मयंक प्रकाशन

भूषण भवन, मण्डी बांस,

मुरादाबाद

प्रस्तुत पुस्तक भारत सरकार की प्रकाशकों के सहयोग से हिन्दी में लोकप्रिय पुस्तकों के लेखन, अनुवाद और प्रकाशन की योजना के अन्तर्गत प्रकाशित की गई है और प्रकाशक द्वारा इस पुस्तक के प्रथम संस्करण में प्रकाशित पुस्तक की 3000 प्रतियों में से भारत सरकार ने 1000 प्रतियों की खरीद की है। इस पुस्तक के लेखक डॉ० कृष्णकुमार हैं।

मूल्य : रु० 1[illegible] रु० 20-00

प्रथम संस्करण 1980 © डॉ० कृष्णकुमार

पोषण के लिये खनिज और विटामिन—डॉ० कृष्णकुमार

मुद्रक :

साहित्यकार प्रेस, मेरठ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
87482
गुरुकुल कांगड़ी विश्व

प्रस्तावना

हिन्दी में ज्ञान-विज्ञान का विविध साहित्य उपलब्ध कराने के लिए भारत सरकार पुस्तक-प्रकाशन की अनेक योजनाओं पर कार्य कर रही है। शिक्षा तथा संस्कृति मंत्रालय के तत्वावधान में सन् 1961 से केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय प्रकाशकों के सहयोग से लोकप्रिय विषयों में हिन्दी-पुस्तकों के लेखन और प्रकाशन की योजना चला रहा है। इस योजना का मुख्य उद्देश्य है, जन-साधारण में आधुनिक ज्ञान-विज्ञान का प्रचार-प्रसार करना और साथ ही हिन्दीतर भाषाओं के साहित्य की रोचक और लोकप्रिय पुस्तकों को हिन्दी में सुलभ कराना ताकि राष्ट्रीय एकता, धर्मनिरपेक्षता और मानवता की भावना को बल मिले। इस योजना में प्रकाशित होने वाली पुस्तकों को अधिक से अधिक पाठकों तक पहुँचाने के विचार से इनका विक्रय मूल्य कम रखा जाता है। इन पुस्तकों में वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग द्वारा निर्मित शब्दावली का प्रयोग किया जाता है। पुस्तक में विचार लेखक के अपने ही होते हैं।

प्रस्तुत पुस्तक में भोजन में विटामिनों और खनिजों के स्थान का रोचक वर्णन सरल भाषा में किया गया है। इसमें बताया गया है कि शरीर के पोषण, शारीरिक क्रियाओं के संचालन तथा शक्ति की प्राप्ति के लिए खनिज और विटामिन किस प्रकार आवश्यक हैं। लेखक ने विटामिनों तथा खनिजों के कार्य और उनकी कमी से उत्पन्न होने वाले विकारों का विवरण भी प्रस्तुत किया है। आशा है कि यह पुस्तक सभी लोगों के लिए उपयोगी सिद्ध होगी।

डा० (श्रीमती) कपिला वात्स्यायन
अध्यक्ष, वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग तथा निदेशक, केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय।

शिक्षा तथा संस्कृति मंत्रालय,
भारत सरकार, पश्चिमी
खण्ड–7, रामकृष्णपुरम्
नई दिल्ली।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेखक का निवेदन

शरीर को जीवित एवं स्वस्थ बनाये रखने के लिये भोजन प्रथम आवश्यकता है। उचित गुणों से युक्त समुचित मात्रा में लिया गया भोजन शरीर को पुष्ट एवं स्वस्थ तो रखता ही है, मानसिक स्वस्थता एवं चैतन्य के लिये भी यह अनिवार्य है। प्राचीन चिकित्सा विज्ञान के आचार्यों ने शरीर को धारण करने वाले तीन तत्त्वों में भोजन को सबसे पहला स्थान दिया है। इनका युक्तियुक्त प्रयोग होने से शरीर में बल और वर्ण की वृद्धि होती है और यह पुष्ट होता है।[1]

भोजन अनेक प्रकार का है और सभी मनुष्य एक-सा भोजन नहीं लेते। स्थान, ऋतु, जाति, धर्म, समाज एवं रुचि की भिन्नताओं के कारण मनुष्यों के भोजनों में भी भिन्नता होती है। प्रत्येक मनुष्य अपनी रुचि एवं परिस्थिति के अनुसार भोजन को चुन लेता है। परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि प्रत्येक मनुष्य का अपनी रुचि का भोजन उसके शरीर की सभी आवश्यकताओं को पूरा कर रहा हो। अनेक बार यह देखा गया है कि समुचित मात्रा में भोजन को लेने वाला व्यक्ति भी पूरा पोषण प्राप्त नहीं कर रहा होता। अतः किन भोजनों को कितनी मात्रा में लेने पर शरीर की स्वस्थता बनी रह सकती है और शरीर की समुचित वृद्धि हो सकती है, इसका ज्ञान समझदार मनुष्य को अवश्य होना चाहिये।

शरीर की क्रियाओं का समुचित अध्ययन करके वैज्ञानिकों ने यह पाया है कि शरीर को जिन भोजनों की आवश्यकता होती है, उनमें ६ घटकों की समुचित मात्रायें होनी चाहियें। ये घटक हैं— प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, जल, विटामिन और खनिज। इन घटकों में से किसी एक घटक के भी समुचित मात्रा में शरीर में न पहुँचने पर पोषण समुचित प्रकार से नहीं होता और अनेक रोगों के उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है। उपलब्ध भोजनों की राशि में मुख्य भाग प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट

---

१. त्रय उपस्तम्भा इत्याहारः, स्वप्नो ब्रह्मचर्यमिति। एभिस्त्रिभिर्युक्तियुक्तैरुपस्तब्धमुपस्तम्भैः शरीरं बलवर्णोपचयोपचितमनुवर्तते, यावदायुः संस्कारात्। चरक संहिता सूत्रस्थान ११.३३॥

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और वसा का है। प्रत्येक भोजन में इन घटकों की न्यून-अधिक मात्रायें होती हैं। परन्तु किन्हीं भोजनों में प्रोटीन अधिक हो सकती है, किन्हीं में कार्बोहाइड्रेट और किन्हीं में वसा। जल की मात्रायें भी भोजनों में रहती हैं और इसके कम होने पर बाहर से जल को मिलाया जा सकता है। इस प्रकार भोजन के इन चार घटकों से उदर की पूर्ति हो जाती है।

यह देखा गया है कि भोजन द्वारा उदर की पूर्ति हो जाने पर भी मनुष्य के शरीर में कुछ विशेष प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं और वे रोग विशेष प्रकार के भोजनों को देने पर दूर हो जाते हैं। इन रोगों की चिकित्सा की खोज ने ही भोजनों में विटामिनों और खनिजों की खोज को जन्म दिया। भोजन के ये घटक शरीर की वृद्धि, पोषण और स्वस्थता के लिये अनिवार्य सिद्ध हुये। विभिन्न भोजनों में ये घटक कम या अधिक मात्रा में रहते हैं। कुछ भोजनों में किन्हीं विशेष विटामिनों एवं खनिजों की मात्रा प्रचुर होती है, जबकि किन्हीं की बिलकुल भी नहीं होती। अतः स्वस्थ रहने के लिये यह आवश्यक है कि मनुष्य का भोजन मिश्रित एवं सन्तुलित हो, जिससे कि उसको प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट और वसा के साथ-साथ विटामिनों एवं खनिजों की भी आवश्यक मात्रायें उपलब्ध होती रहें।

विगत वर्षों में विटामिनों और खनिजों पर बहुत कुछ अनुसन्धान हो चुके हैं तथा इनके शरीर पर होने वाले प्रभावों को जाना जा चुका है। अनेक प्रकार के विटामिनों का अन्वेषण किया जा चुका है तथा इनको प्राकृतिक भोजनों से विशुद्ध रूप से अलग किया जा सका है। इसके साथ ही इन विटामिनों की रासायनिक रचना को जान कर इनका कृत्रिम रूप से संश्लेषण भी किया जा चुका है। विटामिनों के इस संश्लेषण ने पोषण-विज्ञान एवं चिकित्सा-विज्ञान में महान् क्रान्ति उत्पन्न की है। जिन विटामिनों और खनिजों को मनुष्य प्राकृतिक भोजनों से प्राप्त नहीं कर पाता; उनकी पूर्ति वह बाह्य साधनों से कर सकता है। ये विटामिन और खनिज इस समय गोलियों, तरलों और इन्जेक्शनों के रूप में बहुत बड़ी मात्रा में बाजार में प्राप्य हैं। इनका उपयोग अब सामान्य व्यवहार का विषय बन चुका है।

विश्व में सभी मनुष्यों को पोषक भोजन समुचित मात्रा में मिलता रहे और साथ ही उस भोजन में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन एवं खनिज भी समुचित मात्रा में मिलते रहें, यह एक बहुत बड़ी समस्या है। विश्व स्वास्थ्य संगठन और प्रायः प्रत्येक देश की सरकार इस दिशा में सक्रिय है। परन्तु इससे एक नागरिक का कर्तव्य अपने प्रति, अपने परिवार के प्रति और अपने देश के प्रति कम नहीं हो जाता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये उसे भोजन के घटकों का और विशेष रूप से विटामिनों एवं खनिजों का सामान्य ज्ञान अवश्य होना चाहिये। इससे वह अपने पारिवारिक भोजन को सन्तुलित कर सकता है और अपने एवं अपने परिवार के स्वास्थ्य को बनाये रख सकता है। इससे वह और उसका परिवार तो सुखी रहेगा ही वह देश की उन्नति में भी योगदान करेगा।

भोजन के घटकों पर प्रचुर साहित्य की रचना हुई है, परन्तु इस विषय पर वैज्ञानिक रूप से लिखा गया साहित्य हिन्दी में बहुत कम है। इस प्रकार की जानकारी का अपने देश की जनभाषा में सम्यक् प्रकार से उपलब्ध न होना, बहुत खटकने वाली बात है। इस कमी को पूरा करने के उद्देश्य से ही इस पुस्तक को लिखा गया है। इस पुस्तक में भोजन के घटकों का सामान्य परिचय देकर विटामिनों और खनिजों का कुछ अधिक विस्तार से वर्णन किया गया है। इससे एक सामान्य नागरिक भोजन के घटकों के, विशेष रूप से विटामिनों और खनिजों के विषय में कुछ जानकारी प्राप्त कर सकेगा और अपने भोजन को सन्तुलित कर सकेगा।

यथासाध्य यह प्रयत्न किया गया है कि पारिभाषिक शब्दों की संख्या कम से कम हो। परन्तु प्रयत्न करने पर भी कुछ पारिभाषिक शब्द इस पुस्तक में आ ही गये हैं। ये शब्द भारत सरकार द्वारा निर्धारित शब्दावली के अनुसार दिये गये हैं। इसके साथ ही इन हिन्दी पारिभाषिक शब्दों के अंग्रेजी समानार्थक शब्द पुस्तक के अन्त में दे दिये गये हैं, जिससे कि पाठकों को समझने में सरलता हो सके।

लेखक को आशा है कि यह पुस्तक सामान्य जनता के भोजन की समस्याओं को यत् किञ्चित् हल करने में सहायक होगी और राष्ट्रीय स्वास्थ्य को उन्नत कर सकेगी। इसके साथ ही हिन्दी भाषा में इस प्रकार के साहित्य की कमी को पूरा करने में भी इस पुस्तक का योगदान हो सकेगा।

निवेदक
कृष्णकुमार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-क्रम

लेखक का निवेदन i–iii

विषय-क्रम iv–v

पहला अध्याय पोषण 1–12

पोषण का संक्षिप्त इतिहास (1); भोजन के कार्य (3); भोजन के छः पोषक घटक (5); प्रोटीन (6), कार्बोहाइड्रेट (7), वसा (9); जल (10); खनिज और विटामिन (11)।

दूसरा अध्याय खनिज 13–32

खनिजों का शरीर के लिये उपयोग (13), कैल्सियम और फॉस्फोरस (14), मैग्नीशियम (21); सोडियम, पोटैशियम और क्लोरीन (21) गन्धक (22), लोह (23); ताम्र (27), कोबाल्ट (27), यशद (27); मैंगनीज (28), संखिया (28), ऐलुमिनियम (28), फ्लुओरीन (28); आयोडीन (30)।

तीसरा अध्याय विटामिनों का महत्त्व और अन्वेषण 33–39

विटामिनों के अन्वेषण का संक्षिप्त इतिहास (33), शरीर को विटामिनों की उपलब्धि (36); विटामिनों का संश्लेषण (37), विटामिनों का वर्गीकरण (37)।

चौथा अध्याय वसाविलेय विटामिनें 40–57

विटामिन A (40); विटामिन D (47), विटामिन E (53), विटामिन K (55)।

पाँचवां अध्याय जलविलेय विटामिनें 58–96

विटामिन B संमिश्र (58); विटामिन B_1 (59), विटामिन B_2 (65), नियासिन (69); पैन्टोथीनिक अम्ल (76),

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन B_6 (78), बायोटिन (80), फोलिक अम्ल (82), इनोसिटोल (84), कोलिन (85), पैराएमिनोबेन्जोइक अम्ल (86), विटामिन B_{12} (86), विटामिन C (88), विटामिन P (96)।

छठा अध्याय — **विटामिनों और खनिजों की कमी से उत्पन्न होने वाले कुछ विशेष रोग** — 97–112

विटामिन A की कमी के रोग (97); विटामिन D की कमी के रोग (99); सूखा रोग (99), अस्थिमृदुता (100), विटामिन B संमिश्र की कमी के रोग (101), बेरी-बेरी (101), रिबोफ्लेविनहीनता (104); पेलाग्रा (105), विटामिन C की कमी के रोग (106), स्कर्वी (107), अरक्तता (108), गलगण्ड (110)।

परिशिष्ट— 113–132

1. खनिजों और विटामिनों की सिफारिशी दैनिक मात्रायें। 113
2. कुछ भोजन-पदार्थों के पोषणात्मक मूल्य। 116
3. सन्दर्भ-पुस्तकें। 126
4. पारिभाषिक शब्दावली (हिन्दी-अंग्रेजी)। 128

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पहला अध्याय

पोषण

भोजन प्राणी के शरीर की प्रथम आवश्यकता है। सभी जीवित प्राणियों को जीवित रहने के लिये भोजन की आवश्यकता होती है। इसके विना उनके जीवन एवं अस्तित्व का बने रहना सम्भव नहीं है। प्राणी को भूख लगती है और वह अपने लिये समुचित भोजन को प्राप्त करके उसको खाता है। उदर में पहुँच कर यह भोजन भूख को शान्त करता है। इसके बाद भोजन का पाचन होता है। वह भोजन शरीर का हिस्सा बन कर उसका पोषण करता है और शक्ति प्रदान करता है। इस प्रकार यह भोजन शरीर की प्रथम अनिवार्य आवश्यकता को पूरा करता है।

भोजन का शरीर के अन्दर पहुँच कर कार्य करना ही पोषण है। पोषण-विज्ञा- एक विज्ञान है, जिसके द्वारा यह जाना जाता है कि प्रत्येक व्यक्ति को किस प्रकार के भोजन की कितनी मात्रा में आवश्यकता है, जिससे कि वह स्वस्थ रह सके और अपनी शारीरिक क्षमता को बनाये रख सके। शरीर के स्वास्थ्य और कार्य-क्षमता को बनाये रखने वाले जितने भी कारक हैं, उनमें पोषण का सबसे अधिक महत्व है। व्यक्ति जो भी कार्य करता है, उसका उसके स्वास्थ्य एवं कार्य-क्षमता से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। स्वास्थ्य और कार्य-क्षमता निश्चित रूप से उस व्यक्ति के भोजन के गुणों और मात्रा पर निर्भर करते हैं। इसलिये शरीर में विभिन्न प्रकार के भोजन किस प्रकार कार्य करते हैं, इसका अध्ययन करना आवश्यक है।

पोषण का संक्षिप्त इतिहास—

पोषण का इतिहास बहुत पुराना है। अनादि काल से प्राणी भोजन करते रहे हैं। बहुत प्राचीन काल में मनुष्यों ने विभिन्न भोजनों की उपयोगिता को जान लिया था। प्राचीन आयुर्वेद ग्रन्थों में विभिन्न प्रकार के भोजनों— अन्न, फल, शाक, जल, दूध, अण्डा, मछली, मांस आदि के गुणों एवं उनके शारीरिक कार्यों का विस्तृत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वर्णन है। उन ग्रन्थों में यह भी बताया गया है कि भोजनों का उपयोग किस प्रकार करना चाहियें, जिससे कि वे शरीर के लिये अधिकतम उपयोगी और लाभप्रद हो सकें।

आधुनिक समय में पोषण विज्ञान बहुत अधिक विकसित हुआ है। संसार के प्रत्येक देश में इसके सम्बन्ध में व्यापक रूप से अन्वेषण किये जा रहे हैं। राष्ट्रीय स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये, जनता को रोगों से मुक्त रखने एवं सबल बनाने के लिये पोषण को उन्नत करना अनिवार्य है। पोषण की उन्नति के लिये प्रायः प्रत्येक देश की सरकार कार्य कर रही है और विश्व स्वास्थ्य संगठन उसका सहायक है।

वर्तमान समय में संसार की पूरी आबादी के लिये पर्याप्त मात्रा में पुष्टिकर भोजन की उपलब्धि एक बहुत बड़ी समस्या है। आबादी में निरन्तर तेजी से वृद्धि होती जा रही है, जबकि उसके पोषण के लिये भोजन की मात्रा में उतनी वृद्धि नहीं हो रही है। इसलिये दुष्पोषण की एक बहुत बड़ी समस्या विश्व के समक्ष उपस्थित हो गई है। विश्व खाद्य संगठन के निर्देशक डा० बी. आर. सेन का कहना है कि विश्व के 30 से 50 करोड़ व्यक्तियों को पूरा भोजन नहीं मिलता तथा 100 से 150 करोड़ व्यक्ति दुष्पोषण से पीड़ित हैं।

पोषण पर, अर्थात् स्वास्थ्य और कार्यक्षमता को बनाये रखने के लिये मनुष्य को किस प्रकार का भोजन कितनी मात्रा में मिलना चाहिये, इस विषय पर वैज्ञानिक रूप से विस्तृत अध्ययन किया गया है और किया जा रहा है। पोषण-विज्ञान अब बहुत अधिक विकसित विज्ञान है। मनुष्यों की आवश्यकताओं और साधनों को दृष्टि में रख कर अनेक अन्वेषण और आविष्कार किये गये हैं, जिससे कि उनको समुचित मात्रा में पुष्टिकारक भोजन मिल सके तथा उनका पोषण ठीक बना रहे। भोजन शरीर में क्या कार्य करता है, किस प्रकार कार्य करता है, भोजन में कौन-कौन से तत्त्व हैं और उनके क्या कार्य हैं, इन विषयों पर गहन एवं विस्तृत अध्ययन किया गया है। भोजन के पोषक तत्त्वों का, उनकी रासायनिक रचना का एवं कार्यों का वैज्ञानिक रूप से विश्लेषण किया जा चुका है।

परीक्षणों और अनुसन्धानों ने यह सिद्ध किया है कि भोजनों में छः प्रकार के पोषक घटक होते हैं— प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, जल, खनिज और विटामिन। शरीर में इन घटकों की अपनी उपयोगिता और कार्य हैं। एक तत्त्व के बिना भी शरीर का पोषण रुक सकता है और शरीर निर्बल होने लगता है। प्रस्तुत प्रबन्ध में इन सभी तत्त्वों का संक्षिप्त परिचय इस पहले अध्याय में देने का प्रयत्न किया

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है। शरीर के निर्माण, शक्ति-सम्पादन, रोगों के प्रतिरोध और क्रियाओं को नियमित करने के लिये विभिन्न खनिजों और विटामिनों की अनिवार्य आवश्यकता है। इनका संक्षिप्त परिचय देना और इनकी उपयोगिता को बताना इस प्रबन्ध का मुख्य उद्देश्य है। खनिजों और विटामिनों के सम्बन्ध में बहुत अन्वेषण किये जा चुके हैं और आगे भी किये जा रहे हैं।

खनिज शरीर की रचना के अनिवार्य घटक हैं। शरीर में उसके भार का लगभग चार प्रतिशत खनिज अंश है। ये खनिज शरीर के विभिन्न अंगों की रचना में तो भाग लेते ही हैं, विभिन्न शारीरिक क्रियाओं के संचालन में भी इनका महत्वपूर्ण योग है।

शारीरिक क्रियाओं के संचालन के लिये विटामिनों की भी अनिवार्य आवश्यकता है। अनेक प्रकार के विटामिन अलग-अलग रूप से और सामूहिक रूप से शरीर की विभिन्न क्रियाओं का संचालन करते हैं।

प्राकृतिक भोजनों में शरीर के पोषण के लिये आवश्यक सभी खनिज और विटामिन उपलब्ध होते हैं। कुछ विशेष खनिज और विटामिन किन्हीं विशेष भोजनों में विशेष मात्राओं में हो सकते हैं। हरे फल, सब्जियाँ, दूध, अण्डा आदि पदार्थ इनके उत्तम स्रोत हैं। परन्तु हमारे देश में ये पदार्थ अधिकांश व्यक्तियों को पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नहीं हो पाते और वे इनकी कमी के कारण दुष्पोषण जन्य रोगों से पीड़ित हो सकते हैं।

विभिन्न रोगों की चिकित्सा के लिये खनिजों और विटामिनों का प्रयोग वर्तमान समय में सामान्य बात हो गई है। विभिन्न खनिजों के चिकित्सा-उपयोगी प्रकल्पन बनाये जा चुके हैं और विटामिनों का प्रयोगशालाओं में संश्लेपण किया जा चुका है। भोजनों में इन खनिजों और विटामिनों की उपलब्धि कम होने पर इनकी आवश्यकता की पूर्ति के लिये गोलियों, तरल मिश्रणों, केप्सूलों और इन्जेक्शनों के रूप में बाजार में सुलभ मूल्यों पर प्राप्त किया जा सकता है। वर्तमान समय में उच्च शक्ति के खनिजों और विटामिनों का प्रयोग चिकित्सक कर रहे हैं। प्रस्तुत प्रबन्ध में इन खनिजों और विटामिनों का संक्षिप्त विवेचन सर्वसाधारण जन के लिये किया जा रहा है।

भोजन के कार्य—

शरीर में भोजन के कौन से कार्य हैं, इनका अध्ययन बहुत प्राचीन काल से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किया जा रहा है। इस सम्बन्ध में पोषण-विज्ञान ने बहुत अधिक उन्नति की है। वैज्ञानिक दृष्टि से भोजन के कार्यों को निम्न प्रकार से वर्गीकृत किया जा सकता है—

1. शरीर का निर्माण करना।
2. विभिन्न कार्यों को सम्पादित करने के लिये शरीर को शक्ति प्रदान करना।
3. शरीर को रोगों से सुरक्षित रखना।
4. शरीर की प्रक्रियाओं को नियमित रखना।

भोजन का पहला प्रमुख कार्य शरीर का निर्माण करना है। जो भी भोजन हम खाते हैं, वह शरीर का एक हिस्सा बन जाता है। यह भोजन जितना ही अधिक गुणशाली होता है, उतना ही अधिक शरीर को मजबूत बनाता है। शरीर का मजबूत बनना भोजन के प्रकार और उसकी मात्रा पर निर्भर करता है। शरीर की वृद्धि के समय, अर्थात् बाल्यावस्था में इस प्रकार के भोजनों का अधिक महत्त्व है, जो शरीर के निर्माण में योग देते हैं। वयस्क व्यक्तियों में, जबकि शरीर की रचना अपने पूरे आकार को प्राप्त कर चुकी है, इस प्रकार के भोजनों की आवश्यकता क्षतिपूर्ति के लिये होती है। प्रतिदिन के कार्यों में शरीर की कोशिकाओं का क्षय होता रहता है। भोजन के शरीर-निर्माता तत्त्व उनकी रचना करके क्षतिपूर्ति करते हैं।

भोजन का दूसरा प्रमुख कार्य शरीर को शक्ति प्रदान करना है। शरीर के ताप को बनाये रखने के लिये, शरीर की वृद्धि के लिये और शारीरिक क्रियाओं के सम्पादन के लिये शक्ति की आवश्यकता होती है। इस शक्ति का उत्पादन भोजन द्वारा होता है। शक्ति को ऊष्मांकों में (कैलोरियों में) मापा जाता है। कठोर शारीरिक श्रम करने वालों को— बोझा ढोने वाले, गाड़ी खींचने वाले, खेत जोतने वाले, खेतों में हल चलाने वाले, पैदल दूर तक चलने वाले, व्यायाम करने वाले और इसी प्रकार के अन्य कठोर काम करने वाले व्यक्तियों को उन व्यक्तियों की अपेक्षा अधिक कैलोरियों वाले भोजन की आवश्यकता होती है, जो दिन भर बैठे रह कर कार्य करते हैं।

भोजन का तीसरा मुख्य कार्य शरीर को रोगों से सुरक्षित रखना है। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता का भोजन से घनिष्ठ सम्बन्ध है। पोषक भोजन के उचित मात्रा में न मिलने से दुष्पोषण होकर रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है तथा इससे अनेक प्रकार के रोगों का आक्रमण हो सकता है। यह देखा गया है कि जिन व्यक्तियों को पूरा भोजन नहीं मिलता, उनमें क्षय रोग का अधिक प्रसार होता है। भोजन में विभिन्न तत्त्वों— प्रोटीनों, खनिजों और विटामिनों की कमी होने से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दुष्पोषण, शोष, शोफ, बेरी-बेरी, पेलाग्रा, स्कर्वी, सूखा, रतौंधी; गलगण्ड, दन्तक्षय, अरक्तता आदि रोग उत्पन्न हो जाते हैं।

भोजन का चौथा प्रमुख कार्य शारीरिक प्रक्रियाओं को नियमित करना है। शरीर की बहुत सी प्रक्रियायें—श्वास लेना, हृदय की गति, शारीरिक सन्तुलन आदि स्वतः ही होती रहती हैं और शरीर इन क्रियाओं को करने के लिये स्वैच्छिक प्रयत्न नहीं करता। इन क्रियाओं को अनैच्छिक क्रियायें कहते हैं। भोजन इन क्रियाओं को नियमित करता है। भोजन द्वारा निम्न अनैच्छिक क्रियाओं का सम्पादन होता है—

1. हृदय की गति को नियमित करना
2. शरीर के तापमान को नियमित करना
3. शरीर से मलों को बाहर निकालना
4. पेशियों का संकोचन।
5. जल-सन्तुलन का नियमन
6. रक्त का जमना

भोजन के पोषक घटक—

प्रकृति में अनेक प्रकार का भोजन उपलब्ध होता है। इन भोजनों के मुख्यतः दो वर्ग किये जा सकते हैं— वनस्पतिज भोजन और जान्तव भोजन। विभिन्न प्रकार के अन्न, दालें, फल, शाक, मेवे, शकर आदि वनस्पतिज भोजन हैं और दूध, अण्डे, मांस, मछली आदि जान्तव भोजन हैं। इन भोजनों के घटकों का वैज्ञानिकों ने विश्लेषण किया है। इनमें निम्न छः प्रकार के पोषक घटक पाये गये हैं—

1. प्रोटीन
2. कार्बोहाइड्रेट
3. वसा
4. जल
5. खनिज
6. विटामिन

अधिकांश भोजनों में ये सभी घटक कम या अधिक मात्रा में पाये जाते हैं। किन्हीं विशेष भोजनों में किसी विशेष घटक की मात्रा अधिक होती है, किसी की कम होती है या किसी की बिलकुल नहीं होती। ये विशेष घटक यद्यपि मिलकर शरीर के पोषण का कार्य करते हैं, तथापि प्रत्येक घटक का अपना विशेष कार्य भी है। प्रत्येक घटक शरीर में पहुंच कर एक या अधिक कार्य करता है। भोजन के इन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पोषक घटकों पर बहुत अधिक वैज्ञानिक अन्वेषण किया जा चुका है और यह पता लगाया जा चुका है कि किस घटक का क्या विशेष कार्य है। भोजन के इन घटकों का सामान्य ज्ञान प्रत्येक मनुष्य को होना चाहिये। इससे वह अपने लिये सन्तुलित आहार की योजना बना सकेगा। इन छः घटकों का और इनके कार्यों का संक्षिप्त विवरण नीचे दिया जा रहा है।

1. प्रोटीन—

हमारे शरीर का सबसे महत्वपूर्ण घटक प्रोटीन है। जल के अनन्तर शरीर के निर्माण में सबसे अधिक अंश प्रोटीन का है, इसलिये प्रोटीन से युक्त भोजनों को शरीर-निर्माता भोजन कहा जाता है। जल-विहीन शरीर में शरीर के भार का आधा भाग प्रोटीन का है। हमारे शरीर की प्रत्येक कोशिका में प्रोटीन होता है। शरीर के प्रत्येक अवयव की— पेशी, अस्थि, दान्त, त्वचा, बाल, रक्त, आन्तरिक अंग आदि की कोशिकाओं की रचना प्रोटीन से होती है। प्रोटीन के बिना शरीर का जीवित रहना सम्भव नहीं है।

प्रोटीन की खोज सबसे पहले एक डच वैज्ञानिक जेरिट जान मुन्डर ने की थी और पता लगाया था कि सभी जीवित प्राणियों और पौधों में एक विशेष पदार्थ है, जिसके बिना जीवन सम्भव नहीं है। उसने इस पदार्थ को प्रोटीन नाम दिया। इस शब्द का अर्थ है— सबसे प्रथम ग्रहण करना। वस्तुतः पोषण के लिये सबसे अधिक महत्व प्रोटीनों का है।

प्रोटीनें एक ही प्रकार की नहीं होतीं। वे सैंकड़ों प्रकार की होती हैं। कुछ प्रकार की प्रोटीनें शरीर के लिये अधिक अनुकूल एवं ग्राह्य हैं और कुछ कम। ये प्रोटीनें अनेक ऐमिनो अम्लों की बनी होती हैं। इनमें कुछ ऐमिनो अम्ल शरीर के लिये अनिवार्य हैं और कुछ अनिवार्य नहीं हैं। जिस प्रोटीन में अनिवार्य ऐमिनो अम्ल जितने अधिक होते हैं, वह प्रोटीन शरीर के लिये उतनी ही अधिक उपयोगी और अनुकूल होती है। मांसज भोजनों में अनिवार्य प्रोटीनों की मात्रा अधिक होती है, इसलिये अनेक वैज्ञानिक मांसज भोजनों को वनस्पतिज भोजनों की अपेक्षा अधिक पोषक प्रतिपादित करते हैं। वनस्पतिज भोजनों में दालों में पर्याप्त प्रोटीन होती है। प्रोटीन की दृष्टि से सोयाबीन सबसे समृद्ध है तथा इसमें अनिवार्य प्रोटीनों की मात्रा भी अधिक है। यद्यपि अनेक भोजनों में अनेक न-अनिवार्य प्रोटीनें होती हैं, तथापि शरीर में यह सामर्थ्य है कि वह इन न-अनिवार्य प्रोटीनों को अनिवार्य प्रोटीनों में परिणत कर सके।

प्रोटीनों का प्रथम मुख्य कार्य शरीर के निर्माण करने के लिये आवश्यक द्रव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को प्रदान करना है। बाल्यावस्था में शरीर की वृद्धि के लिये प्रोटीनों की अधिक आवश्यकता है। गर्भवती स्त्रियों के लिये और दूध पिलाने वाली स्त्रियों के लिये भी प्रोटीनों की अधिक आवश्यकता होती है।

शरीर में प्रतिक्षण विभिन्न अंगों की कोशिकाओं का क्षय होता रहता है। इन कोशिकाओं की क्षति की पूर्ति और निर्माण का कार्य प्रोटीनों द्वारा होता है। वयस्कों में इन कोशिकाओं की क्षति की पूर्ति प्रोटीनें ही करती हैं।

रोगों का प्रतिरोध करने के लिये हमारे शरीर में रोग निवारक तत्त्व होते हैं। इनका निर्माण प्रोटीनों द्वारा होता है। भोजन का पाचन करने वाले एन्जाइमों और शरीर को नियन्त्रित करने वाले हारमोनों की रचना में भी प्रोटीनों का सबसे अधिक योग है।

प्रोटीनें शरीर में शक्ति भी प्रदान कर सकती हैं। परन्तु ये इस कार्य को तभी करती हैं, जबकि शरीर में कार्बोहाइड्रेटों और वसाओं की पूर्ति आवश्यक मात्रा में न हो। जब प्रोटीनें शक्ति प्रदान करती हैं तो शरीर का निर्माण नहीं कर सकतीं। उपवास करने की अवस्था में, जबकि शरीर को शक्तिदायक तत्त्व बाहर से प्राप्त नहीं होते, शरीर के निर्माण में लगी हुई प्रोटीनें शक्ति प्रदान करने लगती हैं और इस प्रकार शरीर का क्षय होने लगता है।

शरीर को प्रोटीनें विभिन्न स्रोतों से प्राप्त होती हैं। प्रोटीनों के प्रमुख स्रोत दूध, अण्डे, माँस, मछली आदि हैं। ये पदार्थ महंगे होने के कारण अधिकांश व्यक्तियों को प्राप्त नहीं होते। भारतवर्ष में धार्मिक आस्थाओं के कारण अनेक व्यक्ति अण्डे, माँस और मछली नहीं लेते। कुछ वानस्पतिक भोजन भी प्रोटीनों के अच्छे स्रोत हैं। दालों और मेवों में प्रचुर प्रोटीनें होती हैं। सोयाबीन में प्रोटीन का अंश बहुत अधिक है तथा इसमें उच्च कोटि की प्रोटीनें हैं। भारतवर्ष में सोयाबीन का उपयोग बहुत कम है, यद्यपि इस ओर खाद्य विशारदों का ध्यान आकर्षित हुआ है। सोयाबीन में 43·2 प्रतिशत प्रोटीन होती है, जबकि विभिन्न प्रकार के माँसों में प्रोटीनों का अंश 20 से 25 प्रतिशत रहता है।

2. कार्बोहाइड्रेट—

हमारे भोजनों में सबसे अधिक अंश कार्बोहाइड्रेटों का होता है। अनुमान किया गया है कि प्रत्येक भारतीय लगभग 400 से 500 ग्राम कार्बोहाइड्रेट प्रतिदिन लेता है। कार्बोहाइड्रेटों का मुख्य कार्य शरीर में पोषक शक्ति और ताप को उत्पन्न करना है। यहाँ पोषक शक्ति से अभिप्राय है— शरीर में कार्य कर सकने की क्षमता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जिस प्रकार किसी मशीन को कार्य करते रहने के लिये ईंधन की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार शरीर को कार्य करते रहने के लिये पोषक शक्ति को उत्पन्न करने वाले भोजनों की आवश्यकता होती है। इस पोषक शक्ति के प्रमुख स्रोत कार्बोहाइड्रेट हैं। शरीर में कार्बोहाइड्रेट के उपचय से शक्ति का उत्पादन होता है।

शरीर में उत्पन्न होने वाली शक्ति को ऊष्मांकों में मापा जाता है। जितने ताप से एक किलोग्राम जल का तापमान एक डिग्री सेन्टीग्रेट बढ़ जावे, वह एक कैलोरी शक्ति है। एक ग्राम कार्बोहाइड्रेट से 4·1 कैलोरी शक्ति उत्पन्न होती है, जबकि एक ग्राम प्रोटीन से 5·65 कैलोरी और एक ग्राम वसा से 9·45 कैलोरी शक्ति उत्पन्न होती है।

भोजनों में कार्बोहाइड्रेट युक्त भोजन सबसे अधिक सुप्राप्य है। ये सबसे अधिक सस्ते भी हैं। सामान्य भारतीय को कार्बोहाइड्रेट प्रचुर भोजन ही सबसे अधिक सुलभ है, इसलिये उनके भोजनों में कार्बोहाइड्रेट का हिस्सा सबसे अधिक होता है। कार्बोहाइड्रेटों के मुख्य स्रोत गेहूँ, ज्वार, मक्का, चावल, आदि अन्न; आलू, शकरकन्दी आदि मूल; केला आदि फल और गुड़, चीनी आदि मीठे पदार्थ हैं। यद्यपि इन भोजनों में प्रोटीन, खनिज, विटामिन आदि पदार्थ भी अल्प मात्रा में होते हैं, तथापि इनका महत्व कार्बोहाइड्रेटों के लिये है। दाल, माँस, दूध आदि में भी अल्प मात्राओं में कार्बोहाइड्रेट होते हैं, परन्तु इनका महत्व प्रोटीनों के लिये है।

भोजनों में उपस्थित कार्बोहाइड्रेट अनेक प्रकार के होते हैं। मुख्य रूप से ये तीन प्रकार के होते हैं—स्टार्च, शर्करा और सेलुलोज। स्टार्च रासायनिक दृष्टि से पोलीसैकराइड होते हैं। अधिकांश शर्करायें डाइसैकराइड हैं। कार्बोहाइड्रेटों का जब पाचन होता है तो पोलीसैकराइड तथा डाइसैकराइड कार्बोहाइड्रेट या तो मोनोसैकराइडों में परिणत होते हैं या ग्लूकोज के रूप में। शरीर में इनका अवशोषण ग्लूकोज के रूप में होता है। ग्लूकोज के उपचय से ही शरीर में शक्ति उत्पन्न होती है। आवश्यकता से अधिक ग्लूकोज ग्लाइकोजन के रूप में यकृत और पेशियों में संचित हो जाता है। आवश्यकता होने पर, कठोर परिश्रम और उपवास की अवस्थाओं में यह ग्लाइकोजन ग्लूकोज में परिणत होकर शरीर को शक्ति प्रदान करता है।

अधिकांश वनस्पतिज भोजनों में सेलूलोज भी होता है। परन्तु इसका पाचन नहीं होता। मनुष्य सेलूलोज को पचा नहीं सकता तथा यह शक्ति का स्रोत नहीं है। सेलूलोज का मुख्य कार्य शरीर में मलों के निष्कासन में सहायता करना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

3. वसा—

वसायें भी भोजन का महत्वपूर्ण घटक हैं। ये मुख्य रूप से शक्ति प्रदान करती हैं। कार्बोहाइड्रेटों (प्रति ग्राम 4·1 कैलोरी) की तुलना में वसाओं से दुगनी से भी अधिक शक्ति (प्रति ग्राम 9·45 कैलोरी) प्राप्त होती है।

वसाओं को दो विभागों में बाँटा जा सकता है— वसा और तेल। यदि पदार्थ 20° सेन्टीग्रेड पर ठोस रहे तो इसको वसा कहते हैं। यदि यह इस तापमान पर द्रव रहता है तो यह तेल कहलाता है। तापमान के प्रति यह प्रतिक्रिया पदार्थ की रासायनिक रचना के कारण होती है। प्रायः जान्तव वसायें वसा हैं और वनस्पतिज वसायें तेल हैं। परन्तु इनमें अपवाद भी हो सकते हैं। मछली का तेल 20° सेन्टीग्रेड तापमान पर द्रव रहता है और गोले का तेल इस तापमान पर ठोस रहता है।

वसाओं का मुख्य कार्य शक्ति उत्पन्न करना है। मानव के पोषण के लिये इनको बहुत प्राचीन काल से महत्वपूर्ण माना जाता रहा है। वसाओं से प्रोटीनों और कार्बोहाइड्रेटों की अपेक्षा दुगनी से भी अधिक शक्ति उत्पन्न होती है, इसलिये इनको लेने से भोजन की मात्रा कम हो जाती है। अधिक मात्रा में ली गई वसायें शरीर में संचित हो जाती हैं तथा आवश्यकता के समय काम में आती हैं।

शक्ति प्रदान करने के अतिरिक्त वसाओं के और भी कार्य हैं। वसायें आन्तरिक अंगों के चारों ओर आवरण बनाकर उनको सुरक्षा प्रदान करती हैं। वे त्वचा और अन्तस्त्वक् के मध्य में एकत्रित होकर शरीर की गर्मी का क्षय नहीं होने देतीं। कुछ तन्त्रिका अवयवों के निर्माण में भी वसाओं का योग होता है।

कुछ विटामिनें A, D, E और K वसा-विलेय हैं। शरीर में इनके पहुँचने और अवशोषण के लिये भोजन में वसाओं का होना अनिवार्य है। शरीर के लिये कुछ अनिवार्य द्रव्यों— लिंग हार्मोनों, कार्टैक्स हार्मोनों और पित्त अम्लों की रचना में भी वसा का योग होता है। शरीर में विटामिन D की उत्पत्ति वसाओं की सहायता से होती है।

वसाओं को अधिक मात्रा में लेने से कोलेस्टेरोल बनता है। यह कोलेस्टेरोल अनेक रोगों का कारण है। आजकल हृदय रोगों की उत्पत्ति में कोलेस्टेरोल की उत्पत्ति को प्रमुख कारण समझा जाता है।

मनुष्य को वसाओं की उपलब्धि वनस्पतिज तथा जान्तव दोनों स्रोतों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है। सरसों, तिल आदि तेलीय बीज, नारियल और मूँगफली वनस्पतिज वसाओं के मुख्य स्रोत हैं। सोयाबीन का तेल भी खाने के काम में आता है, परन्तु भारतवर्ष में इसका प्रचार बहुत कम है। मांसों और मछलियों में वसाओं की मात्रा अलग-अलग है। सबसे अधिक वसाये सूअर के माँस (13·3 प्रतिशत) और हिलसा मछली में (19·4 प्रतिशत) होती है। अण्डे में 13·3 प्रतिशत वसा है, जो प्राय: इसके पीले भाग में है।

जान्तव वसाओं का एक प्रमुख स्रोत दूध है। दूध से क्रीम या मक्खन निकाल कर वसा को घी के रूप में अलग कर लिया जाता है। गाय के दूध की अपेक्षा (4·1 प्रतिशत) भैंस के दूध में वसा की मात्रा दुगनी (8·8 प्रतिशत) होती है। दूध में वसाओं की मात्रा बहुत कुछ पशु को दिये जाने वाले चारे पर भी निर्भर है।

खाने के लिये वनस्पतिज तेलों का बहुतायत से प्रयोग किया जाता है। भोजनों को पकाने और स्वादिष्ट बनाने के लिये इनका उपयोग किया जाता है। घी की अपेक्षा तेलों के सस्ता होने के कारण वे जनता के लिये अधिक सुलभ हैं। तेलों को स्वच्छ करके तथा इनका हाइड्रोजनीकरण करके इनका रूप भी घी जैसा बनाया गया है। परन्तु इन वनस्पतिज तेलों में विटामिन A और D नहीं होते। भारत सरकार के नियमों के अनुसार हाइड्रोजनीकृत वनस्पतिज तेलों में प्रति औंस में 700 यूनिट विटामिन A मिलाना अनिवार्य है। अनेक निर्माता इनमें 50 यूनिट विटामिन D भी मिलाते हैं।

4. जल—

जल भी भोजन का अनिवार्य घटक है। शरीर के सभी अंगों के निर्माण के लिये जल आवश्यक है। शरीर के भार का लगभग 65 प्रतिशत भाग जल है। अवस्था के अनुसार यह प्रतिशतकता बदलती रहती है। बच्चे के शरीर में जल की प्रतिशतकता अधिक होती है और आयु के बढ़ने के साथ-साथ यह प्रतिशतकता घटती जाती है।

शरीर के अनेक अवयवों की रचना में जल का अनिवार्य भाग है। शरीर के तरलों— रक्त, लसीका, प्रमस्तिष्क मेरु तरल और स्नेहक तरल आदि में अधिकांश भाग जल का ही होता है।

शरीर का पोषण जल के बिना नहीं हो सकता। जल भोजन के अवयवों को घोल कर इनके अवशोषण में सहायक होता है। पाचक रसों की उत्पत्ति के लिये और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनके ठीक प्रकार से कार्य सम्पादन के लिये जल अनिवार्य है। शरीर के तापमान को नियमित रखने में जल सहायक होता है। अनेक अंग शरीर के तरलों से आवृत होते हैं और इन तरलों में अधिकांश भाग जल का है। इस प्रकार जल उन अंगों को आघातों से बचाता है। मस्तिष्क और सुषुम्ना प्रमस्तिष्क मेरु तरल से आवृत है। सन्धियों में स्नेहक तरल रहता है, जो सन्धियों को स्नेहन प्रदान करता है तथा उनकी रक्षा करता है। शरीर के मलों को घोल कर जल उनको मूत्र, विष्ठा और पसीने के मार्ग से बाहर निकालते हैं।

शरीर में से निरन्तर जल का क्षय होता रहता है। अनुमान किया गया है कि एक वयस्क व्यक्ति के शरीर में से प्रतिदिन 2.2 लीटर (2200 मिलीलीटर) जल का क्षय होता है। इसमें एक लीटर जल मूत्र द्वारा, एक लीटर पसीने द्वारा और 0.2 लीटर विष्ठा द्वारा बाहर निकलता है। अतः वयस्क व्यक्ति को कम से कम 2.2 लीटर जल की प्रतिदिन आवश्यकता होती है।

मनुष्य की जल की आवश्यकता की पूर्ति भोजनों द्वारा और जल को पीने से होती है। शरीर के अन्दर की पाचन (उपापचय) की प्रक्रियाओं द्वारा भी शरीर में जल उत्पन्न होता है। अनुमान किया गया है कि वयस्क व्यक्तियों में 0.2 लीटर जल इन पाचक क्रियाओं से उत्पन्न हो जाता है। वयस्क व्यक्ति को 0.9 लीटर के लगभग जल भोजनों से प्राप्त हो जाता है। इस कारण एक वयस्क व्यक्ति को कम से कम 1.1 लीटर जल प्रतिदिन पी लेना चाहिये। गरमियों में तथा गरम स्थानों में पसीने के अधिक आने के कारण जल का अधिक क्षय होता है, इसलिये उस समय अधिक जल की आवश्यकता होती है।

प्रकृति में उपलब्ध जल विशुद्ध जल नहीं है। उसमें अनेक लवण घुले हो सकते हैं। शरीर को इन लवणों की आवश्यकता होती है। जल में अनेक हानिकर पदार्थ भी घुले हो सकते हैं। अतः अधिकारियों को जल की पूर्ति करते हुये इस तथ्य का ध्यान रखना चाहिये।

5, 6, खनिज और विटामिन—

शरीर के निर्माण, पोषण, वृद्धि तथा क्रियाओं का संचालन करने के लिये विभिन्न प्रकार के खनिजों और विटामिनों की अनिवार्य आवश्यकता होती है। यद्यपि विटामिनों और खनिजों का प्रमुख कार्य शारीरिक प्रक्रियाओं का नियन्त्रण और नियमन करना है, तथापि ये शरीर के अंगों के निर्माण में भी भाग लेते हैं।

शरीर के कुल भार में चार प्रतिशत भाग खनिजों का है। अस्थियों और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दान्तों का अधिकांश भाग कैल्सियम और फॉस्फोरस का बना होता है। शरीर के अन्य अवयवों— पेशियों, तन्त्रिकाओं और रुधिर आदि तरलों में भी खनिज द्रव्यों की पर्याप्त मात्रा रहती है।

विटामिन यद्यपि शरीर के निर्माण में प्रत्यक्ष रूप से भाग नहीं लेते, तथापि निर्माण की प्रक्रियाओं में प्रमुख रूप से सहायक होते हैं। प्राणी के शरीर की वृद्धि विकास तथा स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये ये अनिवार्य घटक हैं। शरीर की प्रक्रियाओं को नियन्त्रित रखने में इनका बहुत बड़ा योग है। वैज्ञानिकों ने यह पाया है कि शरीर को स्वस्थ रखने के लिये प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, जल और खनिजों की तो पर्याप्त मात्रा में आवश्यकता होती ही है, कुछ अन्य सहायक पदार्थ भी भोजनों में होते हैं, जो शरीर की वृद्धि, विकास तथा स्वास्थ्य के लिये अनिवार्य होते हैं। इन्हीं पदार्थों को विटामिन नाम दिया गया है।

विटामिनों और खनिजों के सम्बन्ध में यहाँ अधिक नहीं कहा गया है। इस पुस्तक का प्रमुख प्रतिपाद्य विषय खनिज और विटामिन हैं, इसलिये इस प्रसंग में इनका सूक्ष्म उल्लेखमात्र करके विस्तृत वर्णन अगले अध्यायों में किया जा रहा है।

जो भोजन हम लेते हैं, उनमें सामान्यतः इन छः तत्त्वों की प्रधानता होती है और उनका उपयोग इन छः तत्वों की प्राप्ति के लिये किया जाता है। परन्तु कुछ भोज्य पदार्थ ऐसे हैं, जिनकी भोजनों में गणना इन तत्त्वों के कारण नहीं है। पोषण की दृष्टि से तो इनका अधिक महत्व नहीं है, तथापि इनको सहायक भोजनों के रूप में रखा जा सकता है। मसाले, चाय, काफी और अन्य पेय पदार्थ इसी वर्ग में रखे जा सकते हैं। ये शरीर में उत्तेजना उत्पन्न करते हैं। पाचक रसों के उत्पन्न होने में सहायक होते हैं और भूख को बढ़ाकर भोजन की इच्छा को बढ़ाते हैं।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दूसरा
अध्याय

खनिज

शरीर के विभिन्न अंगों के निर्माण, शरीर की वृद्धि और अनेक शारीरिक क्रियाओं के संचालन के लिये खनिजों का शरीर में उपयोग होता है। यद्यपि प्रोटीन आदि के समान इनकी बहुत बड़ी मात्रा की आवश्यकता शरीर को नहीं होती, तथापि ये आवश्यक मात्रा में उपलब्ध होते रहने चाहियें।

खनिजों का शरीर के लिये उपयोग—

शरीर के पोषण के लिये खनिजों की अनिवार्य आवश्यकता है। शरीर के भार का लगभग चार प्रतिशत भाग खनिजों का बना हुआ है। इसलिए शरीर के भार को बनाये रखने के लिये और शरीर की प्रक्रियाओं के सुचारु रूप से संचालन के लिये भोजनों में खनिजों का उचित मात्रा में होना आवश्यक है।

खनिजों का अधिकांश भाग अस्थियों और दान्तों में होता है। इनमें मुख्य रूप से कैल्सियम और फॉस्फोरस होते हैं। शरीर के अन्य हिस्सों में— पेशियों, तन्त्रिकाओं और रुधिर आदि तरलों में भी खनिज द्रव्यों की पर्याप्त मात्रायें रहती हैं।

शरीर के पोषण और संचालन में खनिजों का अत्यधिक महत्व है। अस्थियों और दान्तों के निर्माण में, शरीर के तरलों की रचना में और अन्य अंगों के बनने में खनिजों का निश्चित रूप से योग होता है। हीमोग्लोबिन और हॉर्मोनों की रचना इनके बिना नहीं हो सकती। शरीर की रचना के अतिरिक्त वे और भी बहुत से कार्यों में भाग लेते हैं। शरीर के अम्ल-समाक्षार सन्तुलन को बनाये रखने और जल-सन्तुलन को नियमित रखने में ये सहायक हैं। पेशियों के संकोचन और तन्त्रिकाओं की अनुक्रिया में ये योग देते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर में अनेक खनिज हैं। इनमें 14 खनिज प्रमुख हैं। इन खनिजों को दो वर्गों में बांटा जा सकता है। अधिक मात्रा में पाये जाने वाले खनिज और अत्यल्प मात्रा में पाये जाने वाले खनिज। पहले वर्ग में कैल्सियम, फॉस्फोरस, पोटेशियम, सोडियम, क्लोरीन, मेग्नीशियम, लोह और गन्धक हैं। दूसरे वर्ग में आयोडीन, मेंगनीज, ताम्र, यशद, फ्लुओरीन और कोबाल्ट हैं। इनमें कैल्सियम और फॉस्फोरस की मात्रा शरीर में सबसे अधिक, शरीर के भार का क्रमश: 1·5 से 2·2 और 0·8 से 1·2 प्रतिशत है।

सामान्यत: मनुष्य जिन मिश्रित भोजनों को लेते हैं, उनसे शरीर की इन खनिजों की आवश्यकता पूरी हो जाती है। कुछ खनिज प्राय: प्रत्येक भोजन में होते हैं। इस लिये ये सरलता से प्राप्य हैं। परन्तु कुछ खनिज कुछ विशिष्ट भोजनों में ही होते हैं। इसलिये उन विशिष्ट भोजनों के न लेने पर शरीर में उन खनिजों की न्यूनता हो सकती है। जिन खनिजों की प्राय: न्यूनता हो सकती है, वे हैं–– कैल्सियम, फॉस्फोरस, लोह और आयोडीन।

कैल्सियम और फॉस्फोरस की पूर्ति का सबसे उत्तम स्रोत दूध है। दूध के अतिरिक्त अण्डों, मछलियों, छोटी मछलियों की अस्थियों, हरी-पत्तेदार सब्जियों और कुछ अनाजों में भी कैल्सियम और फॉस्फोरस उपलब्ध होते हैं। दक्षिण भारत में बहुतायत से खाये जाने वाले रागी नामक अनाज में प्रचुर कैल्सियम होता है।

अनाजों के ऊपर के छिलकों, हरी पत्तेदार सब्जियों, अण्डों, दालों और मांसों में प्रचुर लोह होता है। भूमि में आयोडीन की पर्याप्त मात्रा होती है। इसलिये भूमि में उगने वाली वनस्पतियों और अन्नों से मनुष्य की आयोडीन की आवश्यकता पूरी हो जाती है। आयोडीन जल में प्रचुर विलेय है। पर्वतीय स्थानों में प्रचुर वर्षा होती है और भूमि का आयोडीन वर्षा के जल के साथ घुल कर वह जाता है। इसलिये पर्वतीय प्रदेशों में उत्पन्न होने वाले पौधों में आयोडीन की कमी होती है। यही कारण है कि पर्वतीय प्रदेशों में आयोडीन की कमी हो जाने से गलगण्ड रोग का प्रसार अधिक है। शरीर में आयोडीन की कमी न हो, इसके लिये अनेक देशों में नमक को आयोडिनीकृत करने के लिये कानून बनाये गये हैं।

शरीर के लिये खनिजों के महत्व को दृष्टि में रखकर कुछ खनिजों का पृथक् रूप से सर्वेक्षण करना उचित होगा।

१, २. कैल्सियम और फॉस्फोरस—

शरीर की वृद्धि, विकास और स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये कैल्सियम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और फॉस्फोरस अनिवार्य तत्त्व हैं । अस्थियों और दान्तों की रचना अनिवार्य रूप से इन तत्वों से होती है । भोजन द्वारा ये खनिज आन्तों में पहुँचते हैं । यहाँ इनका अवशोषण होता है और अवशोपित होने के बाद ये रुधिर में पहुँच जाते हैं । रुधिर इन खनिजों को शरीर के विभिन्न अंगों में पहुँचाता है और वहाँ ये उन अंगों का पोषण करते हैं ।

कैल्सियम और फॉस्फोरस सदा साथ रहते हैं, इसलिये यहाँ इनका वर्णन एक साथ किया जा रहा है । अस्थियों और रुधिर में ये खनिज कैल्सियम फॉस्फेट के रूप रहते हैं । भोज्य पदार्थों में भी इन दोनों खनिजों की उपस्थिति साथ-साथ रहती है । इसलिये कैल्सियम की पूर्ति के लिये जब किसी भोजन में उसकी मात्रा निर्धारित की जाती है, तो फॉस्फोरस की पूर्ति की गणना स्वयं हो जाती है ।

शरीर में खनिजों का अधिकांश भाग कैल्सियम और फॉस्फोरस का होता है । शरीर के भार का लगभग 1·76 प्रतिशत भाग कैल्सियम का और लगभग 0·94 प्रतिशत भाग फॉस्फोरस का है ।

लगभग 99 प्रतिशत कैल्सियम अस्थियों और दाँतों में रहता है । यहाँ यह कैल्सियम फॉस्फेट के रूप में होता है । अवशिष्ट कैल्सियम शरीर के तरलों में कैल्सियम आयनों के रूप में रहता है । यह कैल्सियम शरीर की अनेक क्रियाओं को, जैसे—पेशियों और तन्त्रिकाओं की सक्रियता, रुधिर का जमना, कोशिकाओं की झिल्लियों की पारगम्यता आदि को नियन्त्रित रखता है । फॉस्फोरस का लगभग 80 प्रतिशत भाग अस्थियों और दाँतों में रहता है । इसका शेष भाग शरीर के अन्य कोमल अवयवों में रहता है । प्रत्येक कोशिका में फॉस्फोरस का कुछ अंश अवश्य होता है ।

शरीर में कैल्सियम और फॉस्फोरस के कार्य—

शरीर की रचना में और शारीरिक प्रक्रियाओं में कैल्सियम और फॉस्फोरस के अनेक कार्य हैं । इन कार्यों को निम्न प्रकार से परिगणित किया जा सकता है—

1. अस्थियों और दाँतों की रचना के लिये कैल्सियम और फॉस्फोरस अनिवार्य हैं । अस्थियों के लिये निर्माण के लिये विटामिन D इनके अवशोषण में अनिवार्य रूप से सहायक होता है ।

2 रुधिर के जमने के लिये कैल्सियम अनिवार्य घटक है । रुधिर में कैल्सियम आयनों के कम हो जाने पर बहता हुआ रुधिर जमता नहीं है । यह घाव में से निरन्तर बहता रहता है ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

3. पेशियों के संकुचन में और हृदय की गति के बने रहने में कैल्सियम आयनों का उपयोग होता है। कैल्सियम के कम हो जाने पर पेशियों की संकुचन की क्षमता कम हो जाती है।

4. शरीर के अनेक एन्जाइमों की रचना में और सक्रियता में फॉस्फोरस का विशेष भाग है। ऐडिनोसिन ट्राइफॉस्फेट आदि अनेक एन्जाइमों का यह घटक है। कार्बोहाइड्रेटों के पाचन में और ग्लूकोज के शरीर में उपयोग में इनका महत्व है।

5. कोशिकाओं की संख्या बढ़ने के लिये और शरीर की वृद्धि के लिये फॉस्फोरस की पर्याप्त पूर्ति होनी चाहिये।

6. कोशिकाओं की झिल्लियों की पारगम्यता को नियन्त्रित रखने के लिये कैल्सियम की अनिवार्यता होती है।

कैल्सियम और फास्फोरस का अवशोषण—

भोजनों में कैल्सियम और फॉस्फोरस के पर्याप्त मात्रा में होने पर भी यह आवश्यक नहीं कि उनका शरीर में अवशोषण हो जावे और वे शरीर को प्राप्य हों। अनेक कारक इन दोनों खनिजों के शरीर में अवशोषण को प्रभावित करते हैं। निम्न कारक शरीर में कैल्सियम और फॉस्फोरस के अवशोषण को बढ़ाते हैं—

1. कैल्सियम के अवशोषण पर विटामिन D और परावटु ग्रन्थियों के हॉर्मोन का विशेष प्रभाव है। विटामिन D का प्रयोग कैल्सियम और फॉस्फोरस के अवशोषण को बढ़ाता है तथा विष्ठा में इनका उत्सर्जन कम हो जाता है। रुधिर में इन खनिजों की मात्रा में वृद्धि होती है और शरीर को ये अधिक मात्रा में प्राप्य होते हैं।

2. भोजनों में अम्लीय तत्त्व होने पर इनका अवशोषण अधिक होता है। कैल्सियम के लवण क्षारीय घोलों में और उदासीन घोलों में तुरन्त नहीं घुलते। आमाशय रस में अम्लीयता अधिक होने पर ये अधिक अवशोषित होते हैं। विटामिन C (ऐस्कॉर्बिक अम्ल) से युक्त भोजनों को लेने पर कैल्सियम का अवशोषण बढ़ जाता है।

3. दुग्ध शर्करा (लेक्टोस) कैल्सियम के अवशोषण में वृद्धि करता है। इसी कारण दूध का कैल्सियम सबसे अधिक सुप्राप्य समझा जाता है। सम्भवतः इसका कारण है कि आन्तों में यह लेक्टोस आन्त्रीय जीवाणुओं द्वारा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लैक्टिक अम्ल में परिणत हो जाता है तथा यह अम्ल कैल्सियम के अवशोषण को प्रभावित करता है।

4. भोजनों में वसा की उपस्थिति भी इन खनिजों के अवशोषण को बढ़ाती है। वसा के न होने पर इन खनिजों के अवशोषण में रुकावट होती है।

5. जान्तव भोजनों के कैल्सियम और फॉस्फोरस वनस्पतिज भोजनों के कैल्सियम और फॉस्फोरस की अपेक्षा अधिक अवशोषित होते हैं।

6. कैल्सियम और फॉस्फोरस का अवशोषण इस बात पर भी निर्भर करता है कि भोजनों में ये परस्पर किस अनुपात में उपस्थित हैं। भोजनों में कैल्सियम की तुलना में फॉस्फोरस का अनुपात कम होने पर ये खनिज अधिक अवशोषित होते हैं। अनुपात बराबर होने पर अवशोषण इससे कम होता है। फॉस्फोरस का अनुपात अधिक हो जाने पर इनका अवशोषण और भी कम हो जाता है। कैल्सियम और फॉस्फोरस का अनुपात 2:1 होने पर इनका अधिकतम अवशोषण होता है।

7. कैल्सियम और फॉस्फोरस का अवशोषण इनकी आवश्कता पर भी निर्भर है। जिन अवस्थाओं में शरीर को इनकी आवश्यकता अधिक होती है, जैसे— बाल्यावस्था में और गर्भावस्था में, उस समय इनका अवशोषण अधिक हो जाता है। जब शरीर को इनकी आवश्यकता कम होती है तो इन खनिजों के भोजनों में अधिक होने पर भी इनका अवशोषण अधिक नहीं होता।

8. कैल्सियम के अवशोषण पर लिंग हॉर्मोनों का भी प्रभाव पड़ता है। स्त्रियों की वृद्धावस्था में, जबकि उनका रज:स्राव बन्द हो जाता है, इन खनिजों का अवशोषण कम होने लगता है। इन अवस्थाओं में एस्ट्रोजन और एन्ड्रोजन देने पर स्पष्ट लाभ होता है।

बहुत से कारक ऐसे भी हैं, जो कैल्सियम और फॉस्फोरस के अवशोषण में रुकावट डालते हैं। संक्षेप में वे निम्न हैं—

1. भोजनों में ऑक्सेलिक और फाइटिक अम्लों के होने पर कैल्सियम और फॉस्फोरस के अवशोषण में वाधा होती है। इन अम्लों से कैल्सियम ऑक्सेलेट और कैल्सियम फाइटेट लवण बनते हैं, जो अघुलनशील हैं। अनेक हरी पत्तियों वाली सब्जियों में, कोका में और चाय में ऑक्सेलिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अम्ल होता है। अनाजों के ऊपर के छिलकों में भी ऑक्सेलिक अम्ल होता है।

2. भोजन में सेलुलोज के अधिक होने पर भी इन खनिजों के अवशोषण में बाधा होती है। इसका कारण यह है कि भोजन में सेलुलोज अधिक होने पर विष्ठा की मात्रा बढ़ जाती है। इससे कैल्सियम और फॉस्फोरस अधिक मात्रा में शरीर से बाहर निकल जाते हैं।

3. लोह के यौगिकों को अधिक मात्रा में लम्बी अवधि तक लेने पर भी कैल्सियम और फॉस्फोरस का अवशोषण कम हो जाता है।

4. भोजन में वसा की मात्रा बहुत अधिक हो जाने पर भी इनके अवशोषण में बाधा होती है। वसा न होने पर भी इनका अवशोषण बाधित होता है।

कैल्सियम और फॉस्फोरस की कमी के कारण उत्पन्न होने वाले विकार—

कैल्सियम और फॉस्फोरस का मुख्य कार्य शरीर की वृद्धि करना है। वे अस्थियों और दाँतों का निर्माण करते हैं। इन खनिजों की कमी हो जाने पर शरीर की वृद्धि में रुकावट होती है और अस्थियाँ दुर्बल हो जाती हैं। इससे सूखा और अस्थिमृदुता नामक रोग उत्पन्न होते हैं। इन रोगों में अस्थियों में कैल्सियम की कमी हो जाती है, उनकी कठोरता कम हो जाती है और वे शरीर के भार को सम्भाल नहीं पातीं। वे शीघ्र मुड़ जाती हैं। इस तथ्य का अधिक विस्तृत विवेचन विटामिन D के प्रकरण में दिया गया है।

कैल्सियम और फॉस्फोरस की शरीर में कमी भोजनों में इन खनिजों की कमी के कारण होती है। परन्तु कुछ अन्य कारण भी शरीर में इन खनिजों की कमी उत्पन्न कर सकते हैं। शरीर में कैल्सियम और फॉस्फोरस की कमी होने के मुख्य कारण निम्न हो सकते हैं—

1. भोजन के पदार्थों में कैल्सियम और फॉस्फोरस का कम होना।
2. आन्त्र द्वारा कैल्सियम और फॉस्फोरस के अवशोषण में कमी हो जाना।
3. विटामिन D की कमी हो जाना।

बच्चों की गर्भावस्था में तथा बच्चों को दूध पिलाते समय माता को अधिक कैल्सियम की आवश्यकता होती है। यदि इस समय उनको कैल्सियम प्रचुर मात्रा में न मिले तो गर्भस्थ शिशु और दूध पीने वाला शिशु अपनी कैल्सियम की आवश्यकता को माता की अस्थियों के कैल्सियम से पूरा करता है। इससे उन माताओं की लम्बी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अस्थियों में कैल्सियम की कमी हो जाती है। उनकी अस्थियाँ भंगुर हो जाती हैं और सरलता से टूट सकती हैं। इस प्रकार होने वाला अस्थियों का क्षत बहुत कठिनता से भरता है।

शरीर को कैल्सियम और फॉस्फोरस की आवश्यकता—

बढ़ते हुये बच्चों में अस्थियों और दाँतों के निर्माण के लिये कैल्सियम और फॉस्फोरस अनिवार्य रूप से चाहिये। वयस्कों और वृद्धों को भी कैल्सियम की अनिवार्य आवश्यकता है, क्योंकि अस्थियों की सुरक्षा तथा दृढ़ता एवं कठोरता इन खनिजों से ही बनी रह सकती हैं। गर्भिणी स्त्रियों और दूध पिलाने वाली माताओं को इन खनिजों की अधिक आवश्यकता होती है।

शिशुओं को प्रतिदिन कम से कम एक ग्राम कैल्सियम मिलना चाहिये। उनकी यह आवश्यकता प्रायः दूध से पूरा हो जाती है। किशोरों को 1·2 ग्राम और वयस्कों को 0·8 ग्राम कैल्सियम प्रतिदिन कम से कम मिलना चाहिये। गर्भिणी स्त्रियों को 1·5 ग्राम और दूध पिलाने वाली माताओं को 2 ग्राम कैल्सियम प्रतिदिन मिल जाना चाहिये। भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान संस्थान ने कैल्सियम की प्रतिदिन की मात्रा की निम्न सिफारिश की है—

बालक—

0 से 12 वर्ष की आयु तक	1·0 से 1·5 ग्राम

वयस्क —

पुरुष	1 ग्राम
स्त्री	1 ग्राम
गर्भिणी स्त्री	1.5 ग्राम
दूध पिलाने वाली माता	2·0 ग्राम

कैल्सियम की आवश्यकतायें सामान्यतः भोजनों से पूरी हो जाती हैं। परन्तु भोजनों से इन आवश्यकताओं के पूरा न होने पर कैल्सियम के यौगिक दिये जा सकते हैं। कैल्सियम क्लोराइड, कैल्सियम ग्लूकोनेट, कैल्सियम फॉस्फेट और कैल्सियम हाइपोफोस्फेट प्रमुख यौगिक हैं।

प्रतिदिन के भोजनों में फॉस्फोरस पर्याप्त मात्रा में रहता है। सामान्यतः एक वयस्क व्यक्ति को 0·88 ग्राम फॉस्फोरस की प्रतिदिन आवश्यकता होती है, जो उसको अपने दैनिक भोजन से मिल जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कैल्सियम के आहार स्रोत—

कैल्सियम का सबसे उत्तम स्रोत दूध और दूध से बनने वाले पदार्थ हैं। 100 ग्राम दूध में 120 से 200 मिलीग्राम कैल्सियम रहता है। दूध में कैल्सियम के साथ फॉस्फोरस भी उचित अनुपात में रहता है। इस कारण इनका अवशोषण भी अधिकतम होता है। दूध में कैल्सियम के कार्बनिक लवण होते हैं तथा लैक्टोस की उपस्थिति इनके अवशोषण को बढ़ाती है। भारतवर्ष में दूध की कमी है और यह मंहगा है। इसलिये सामान्य जन को कैल्सियम का यह स्रोत सुलभ नहीं है।

हरी सब्जियों और फलों में कैल्सियम प्रचुर मात्रा में रहता है। परन्तु अनेक सब्जियों में ऑक्सेलिक अम्ल रहता है और उसके कारण यह शरीर को पूरी तौर पर उपलब्ध नहीं हो पाता। छोटी मछलियों में कैल्सियम प्रचुर होता है। दालें, गिरियाँ और तेल के बीज कैल्सियम के अच्छे स्रोत हैं। तिलों और नारियल की गिरियों में इसकी अच्छी मात्रा होती है। अनाजों में यद्यपि कैल्सियम की प्रतिशतकता कम है, तथापि उनको मात्रा में अधिक खाया जाने के कारण पर्याप्त कैल्सियम उपलब्ध हो जाता है। कुछ मसालों के पदार्थों में, जैसे—धनिया, जीरा, अजवायन आदि में कैल्सियम बहुत अधिक मात्रा में रहता है।

कुछ प्रमुख भोजनों में कैल्सियम का अंश इस प्रकार है—

भोजन	प्रति 100 ग्राम भोजन में कैल्सियम मिलीग्राम मात्रा में
दूध—	
गाय	120
भैंस	210
मानव स्त्री	28
मावा	956
दूध का चूर्ण	900–1370
मछली छोटी अस्थि सहित	1000
मछली सूखी अस्थि सहित	500–6000
रागी	344
चना	200
दालें	60–150
बादाम	230
नारियल की गिरि	400

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

४५/६०
२९०.६

पुस्तकालय
81182
गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय

तिल	1450
बथुआ-पत्ते	397
मेथी-पत्ते	395
चौलाई-पत्ते	290
प्याज	180
आंवला	50
सन्तरा	50
खरबूजा	65
इमली का गूदा	170
पान का पत्ता	230
धनिये के बीज	630
जीरा-बीज	1080
मेथी-बीज	160
अजवायन-बीज	1525

3. मैग्नीशियम—

शरीर के पोषण के लिये मैग्नीशियम की भी आवश्यकता है। रुधिर के सीरम में यह खनिज 2 से 3 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम में होता है। रुधिर की रक्त कणिकाओं में इस खनिज की प्रतिशतकता इससे कुछ अधिक होती है। शरीर के कोमल अवयवों में मैग्नीशियम की प्रतिशतकता कैल्सियम से अधिक होती है।

मैग्नीशियम की कमी से अपतानिका के लक्षण उत्पन्न होते हैं। यह खनिज वनस्पतिज और मांसज भोजनों में मनुष्य की आवश्यकता की पूर्ति के लिये पर्याप्त होता है, अतः इसकी न्यूनता का अनुभव नहीं होता। इसकी कमी के परीक्षण प्रयोग-शालाओं में ही किये गये हैं।

4, 5, 6, सोडियम, पोटैशियम और क्लोरीन—

शरीर की पाचन और अन्य क्रियाओं के होने में सोडियम, पोटैशियम और क्लोरीन का घनिष्ठ सम्बन्ध है। ये तीनों ही तत्त्व मनुष्य-शरीर की प्रक्रियाओं के लिये अनिवार्य हैं।

जन्तुओं के शरीर के अवयवों में सोडियम और पोटैशियम खनिज क्लोराइडों और अन्य अकार्बनिक लवणों के रूप में विद्यमान रहते हैं। ये लवण अधिकांश रूप में वनस्पतिज भोजनों में होते हैं। परन्तु वनस्पतियों में सोडियम की अपेक्षा पोटैशियम के लवण अधिक होते हैं। पोटैशियम के लवण सोडियम के लवणों का शरीर से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्सर्जन बढ़ा देते हैं, इसलिये अतिरिक्त सोडियम को खाने की आवश्यकता होती है। यह सोडियम साधारण नमक (सोडियम क्लोराइड) से प्राप्त हो जाता है।

शरीर को इन तीनों तत्त्वों की आवश्यकता है। इनमें से किसी एक के भी कम हो जाने पर शरीर की वृद्धि रुक जाती है और विभिन्न विकार उत्पन्न हो सकते हैं।

सोडियम, पोटैशियम और क्लोरीन का मुख्य कार्य परासरण दाब, जल-सन्तुलन और अम्ल-सामाक्षार सन्तुलन को सामान्य बनाये रखना है। सोडियम और पोटैशियम पेशियों की और तन्त्रिकाओं की उत्तेजनशीलता को सामान्य बनाये रखते हैं। शरीर की कोशिकाओं में और रुधिर में जल-योजन की मात्रा को नियमित करके ये खनिज रुधिर की द्रवता को नियमित रखते हैं।

पाचक रसों की रचना में, जैसे आमाशय का रस, अग्न्याशय का रस और पित्त रस, के निर्माण में सोडियम, पोटैशियम और क्लोरीन का प्रमुख योग होता है।

सामान्यतः वनस्पतिज भोजनों से और साधारण नमक का प्रयोग करने से शरीर की इन खनिजों की आवश्यकतायें पूरी हो जाती हैं।

7. गन्धक—

शरीर के पोषण की दृष्टि से गन्धक का भी अनिवार्य महत्त्व है। मनुष्यों और अन्य जन्तुओं के स्वास्थ्य के बने रहने के लिये गन्धक की पूर्ति होनी अनिवार्य है। शरीर को जितनी भी गन्धक की आवश्यकता होती है, वह उसको भोजन के द्रव्यों से प्राप्त हो जाता है। भोजन की प्रोटीनों में ऐमीनो अम्ल होते हैं, जिनमें गन्धक विद्यमान होता है। सिस्टिन और मिथियोनिन नामक ऐमिनो अम्लों में गन्धक पर्याप्त मात्रा में होता है।

शरीर की अनेक प्रोटीनों में, प्रोटीनों के विशिष्ट अणुओं में और हॉर्मोनों में मिथियोनिन नामक ऐमिनो अम्ल होता है। यह गन्धक से युक्त होता है। ग्लूटाथायोन और पित्त लवणों में भी गन्धक रहता है।

शरीर में गन्धक का उपयोग कुछ ऐमिनो अम्लों की—सिस्टिन और मिथियोनिन की रचना में होता है। गन्धक शरीर के अणुओं को विषरहित करने (निर्विषीकरण) में भी सहायक है।

भोजन के पदार्थों से प्राणियों की गन्धक की आवश्यकता पूरी हो जाती है। भोजन द्रव्यों के प्रोटीनों के सिस्टिन और मिथियोनिन नामक ऐमिनो अम्ल गन्धक की आवश्यकता को पूरा करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

8. लोह—

शरीर की वृद्धि करने में और स्वस्थता को बनाये रखने में लोह एक अनिवार्य तथा महत्त्वपूर्ण खनिज है। हीमोग्लोबिन और रुधिर की लाल कणिकाओं के निर्माण में इसका प्रमुख भाग है। अनेक प्रोटीनों और एन्जाइमों में लोह होता है।

यद्यपि शरीर में लोह की कुल उपस्थित मात्रा बहुत अधिक नहीं है और यह शरीर के कुल भार का 0·004 प्रतिशत होता है, तथापि कार्य की दृष्टि से इसका बहुत महत्त्व है। हीमोग्लोबिन और लाल रक्तकणिकाओं की रचना इसके बिना नहीं हो सकती। शरीर में विद्यमान लोह का 70 प्रतिशत भाग हीमोग्लोबिन में ही रहता है।

लोह के कार्य—

शरीर में लोह का एक प्रमुख कार्य हीमोग्लोबिन के एक घटक हीमे की रचना करना है। हीमे का ग्लोबिन के साथ संयोजन होने पर हीमोग्लोबिन की रचना होती है। अनेक एन्जाइमों की रचना में लोह का योग है।

हीमोग्लोबिन में विद्यमान लोह फेफड़ों से ऑक्सीजन को कोशिकाओं तक ले जाता है तथा कोशिकाओं से कार्बन डाइऑक्साइड को फेफड़ों तक ले आता है। इसके बाद यह कार्बन डाइऑक्साइड फेफड़ों द्वारा बाहर निकाल दी जाती है। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती रहती है।

उपचय तथा अपचय की प्रक्रियाओं के लिये लोह अनिवार्य है। यह अल्प मात्राओं में सदा पेशियों में विद्यमान रहता है।

लोह का अवशोषण—

लोह के दो प्रकार के लवण होते हैं—फेरिक और फेरस। शरीर में लोह का अवशोषण फेरस लवणों के रूप में होता है। फेरिक लवण भी फेरस लवणों के रूप में परिणत होकर ही अवशोषित होते हैं। लोह का अवशोषण छोटी आन्त में होता है। आमाशय का रस इसके अवशोषण में सहायता करता है। लोह के अवशोषण को नियन्त्रित करने वाले कारक निम्न हैं :—

(1) आमाशय रस का हाइड्रोक्लोरिक अम्ल लोह के अवशोषण को बढ़ाता है। यह फेरिक लवणों को फेरस लवणों में परिणत करके इनके अवशोषण में सहायक होता है। विटामिन C (ऐस्कॉर्बिक अम्ल) की उपस्थिति भी लोह के अवशोषण में सहायक होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(2) शरीर की लोह की आवश्यकता भी इसके अवशोषण को नियन्त्रित करती है। जिस समय शरीर को लोह की अधिक आवश्यकता होती है, इसका अवशोषण बढ़ जाता है। स्वस्थ व्यक्तियों की अपेक्षा लोह हीनता जन्य अरक्तता के रोगियों में लोह का अवशोषण अधिक होता है। स्त्रियों में लोह का अवशोषण उस समय अधिक होता है, जब वे गर्भवती होती हैं।

(3) लोह की स्वयं की अवस्था भी इसके अवशोषण को प्रभावित करती है। फेरस लवण के रूप में तथा अधिक घुलनशील रूप में इसका अवशोषण अधिक होता है।

(4) भोजन में ऑक्सेलिक अम्ल और फाइटिक अम्ल की उपस्थिति लोह के अवशोषण में बाधा पहुँचाती है। भोजन में फॉस्फेटों के अधिक मात्रा में होने पर, और विशेष रूप से उस समय जबकि फॉस्फोरस का अनुपात केल्सियम से अधिक हो तो लोह का अवशोषण भी कम हो जाता है।

(5) आन्त्र में कीड़े होने पर और अतिसार रोग होने पर लोह का अवशोषण कम हो जाता है।

यह अनुमान किया गया है कि भोजन में लोह का जितना अंश होता है, उसका लगभग 10 प्रतिशत आन्त्र द्वारा अवशोषित किया जाता है।

लोह की कमी से उत्पन्न होने वाले विकार—

शरीर में लोह का उपयोग मुख्य रूप से हीमोग्लोबिन और लाल रक्त कणिकाओं के निर्माण में होता है। इसलिये लोह की कमी से अरक्तता रोग उत्पन्न होता है।

अरक्तता रोग अनेक कारणों से उत्पन्न हो सकता है, इनमें एक कारण लोह की कमी भी है। लोह की कमी से उत्पन्न अरक्तता को लोह हीनता जन्य अरक्तता या पोषणात्मक अरक्तता कहते हैं। इस अवस्था में हीमोग्लोबिन में लोह की प्रतिशतकता कम हो जाती है। लोह की हीमोग्लोबिन में कमी अनेक कारणों से हो सकती है— भोजन में लोह की न्यूनता हो सकती है, भोजन में लोह की पर्याप्त मात्रा होने पर भी कुछ कारक लोह के अवशोषण का अवरोध कर रहे हो सकते हैं, अथवा शरीर से प्रचुर मात्रा में रक्त निकल जाने के कारण भी लोह की कमी हो सकती है।

दूध में लोह की मात्रा बहुत अल्प होती है। इसलिये कई बार केवल दूध पर लम्बे समय तक रखे जाने पर शिशुओं में लोह हीनता जन्य अरक्तता हो सकती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यह अरक्तता प्रायः सातवें-आठवें महीने में होती है। इसलिये छः महीने की आयु का होने पर शिशु को लोहयुक्त ठोस आहार अल्प मात्रा में देना प्रारम्भ कर देना चाहिये। हिन्दुओं में शिशु का अन्नप्राशन संस्कार छठे महीने में कराया जाता है। प्राचीन आचार्यों का कहना था कि छठे महीने में शिशु को ठोस आहार देना प्रारम्भ कर देना उचित है। इसकी वैज्ञानिक व्याख्या यही है कि इस आयु में शिशु को बाहर से लोह की आवश्यकता होने लगती है। वह उसको दूध से प्राप्त नहीं होता और लोह के लिये ठोस आहार की आवश्यकता होने लगती है।

लोह की आश्वयकता—

भोजनों के पदार्थों में विद्यमान कुल लोह का आन्त्र द्वारा अवशोषण नहीं होता। अनुमान लगाया गया है कि भोजन में विद्यमान कुल लोह का लगभग 10 प्रतिशत अंश और अधिक से अधिक 15 प्रतिशत अंश आन्त्र द्वारा अवशोषित किया जाता है। इसके अतिरिक्त लोह के केवल फेरस लवण ही अवशोषित होते हैं। इस कारण लोह की आहार में उपस्थिति लोह की उस मात्रा से बहुत अधिक होनी चाहिये, जितनी कि शरीर के लिये आवश्यक है।

शरीर में लोह की आवश्यक मात्रा बनी रहे और उसका उचित सन्तुलन बना रहे, इसके लिये एक व्यस्क को प्रतिदिन 10 मिलीग्राम लोह प्रतिदिन मिलना चाहिये। शिशुओं को 5–7 मिलीग्राम और बालकों को 10–12 मिलीग्राम लोह प्रतिदिन चाहिये। स्त्रियों को रज.स्राव की अवस्था में और गर्भावस्था में अधिक लोह की आवश्यकता होती है। इसकी मात्रा 12–15 मिलीग्राम प्रतिदिन होनी चाहिये। गर्भावस्था में लोह की आवश्यकता पूरी न होने पर गर्भपात हो सकता है।

लोह की आवश्यकता की पूर्ति आन्तरिक साधन द्वारा भी होती है। शरीर में हीमोग्लोबिन और लाल रक्त कणिकाओं का जब विघटन होता है, तो लोह मुक्त होता है। इस लोह का शरीर में रचनात्मक कार्यों के लिये उपयोग होता रहता है। इससे भोजन में लोह की आवश्यकता कम हो जाती है।

लोह के आहार स्रोत —

शरीर को लोह की जितनी आवश्यकता है, वह प्रायः भारतीय भोजनों में प्राप्त हो जाती है। उत्तम श्रेणी के भोजन पदार्थों से मनुष्य को प्रतिदिन 30 से 60 मिलीग्राम तक लोह प्राप्त हो जाता है। यकृत, पालक, अण्डे, सूखे फल, आँवला, सेव और अजवायन में लोह प्रचुर मात्रा में होता है। दालों और अनाजों में कुछ मात्रा में लोह होता है। कतिपय भोजन पदार्थों में लोह की मात्रा इस प्रकार है:—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन	प्रति ग्राम भोजन में लोह मिलीग्राम मात्रा में
अनाज—	
बाजरा	13·3
रागी	17·4
चावल साबुत	20·0
गेहूँ	4·9
चना	10·2
बादाम	4·5
तिल	10·5
सब्जियाँ—	
गाजर	2·2
बथुआ पत्ते	25·5
चौलाई पत्ते	20·1
मेथी पत्ते	16·5
मूली पत्ते	16·1
फल—	
आँवला	1·2
सेव	1·0
खरबूजा	1·3
दूध	0·2
अण्डा मुर्गी	2·1
भेड़ का यकृत	6·3
पान का पत्ता	7·0
यीस्ट सूखा	43·7
धनिया बीज	17·9
जीरा बीज	31·0
मेथी बीज	14·1
अजवायन बीज	27·7

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

9. ताम्र

मनुष्य की जीवन शक्ति को बनाये रखने के लिये ताम्र भी एक आवश्यक तत्व है । हीमोग्लोबिन की रचना करने में लोह के साथ इसका महत्वपूर्ण भाग है । यद्यपि ताम्र हीमोग्लोबिन का घटक नहीं है, तथापि यह उत्प्रेरक का कार्य करता है । ताम्र द्वारा चिकित्सा करने पर अरक्तता में लाभ होता है । बच्चों की पोषणिक अरक्तता में ताम्र से युक्त लोह यौगिकों को देने पर विशेष लाभ होता है ।

अनेक प्रोटीनों में ताम्र का अंश पाया गया है । हीमोक्यूप्रिन, यकृतक्यूप्रिन, लोहितक्यूप्रिन, सेरिब्रोक्यूप्रिन और सेरुलोक्यूप्रिन नामक प्रोटीनों में ताम्र के अंश होते हैं ।

ताम्र प्रायः सभी आहार द्रव्यों में पाया जाता है, इस कारण मनुष्यों में इसकी न्यूनता नहीं होती । दूध में उसकी मात्रा अत्यल्प होती है, इसलिए केवल दूध पर निर्वाह करने वाले व्यक्तियों में ताम्र की हीनता के लक्षण हो सकते हैं । यकृत में ताम्र की मात्रा 4 से 5 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम होती है । अनेक गिरीदार फलों और सूखी फलियों में 1 मिलीग्राम ताम्र प्रति 100 ग्राम होता है । गाय के दूध में यह केवल 0.1 मिलीग्राम प्रति 100 ग्राम होता है ।

10. कोबाल्ट —

कोबाल्ट के उपयोग से शरीर में लाल रक्त कणिकाओं की वृद्धि होती है । कोबाल्ट रुधिर में लोहित कोशिकाजनक नामक हॉर्मोन की उत्पत्ति को बढ़ाता है । इससे लाल रक्त कणिकाओं की रचना बढ़ती है । पशुओं पर किए गये प्रयोगों से देखा गया है कि कोबाल्ट क्लोराइड का इन्जेक्शन देने पर इस हार्मोन के रुधिर स्तर में तुरन्त वृद्धि हुई । विटामिन B_{12} का कोबाल्ट के साथ निश्चत सम्बन्ध है । विटामिन B_{12} की कमी में कोबाल्ट की भी कमी हो सकती है । इस विटामिन में 4 प्रतिशत कोबाल्ट होता है ।

11. यशद—

प्राकृतिक रूप से बढने वाले सभी पदार्थों में यशद विद्यमान रहता है । वनस्पतियों की वृद्धि के लिये यशद अनिवार्य है । प्राणियों के पोषण में भी यशद की अनिवार्यता प्रतिपादित की जा चुकी है । यशद द्वारा अनेक एन्जाइम सक्रिय होते हैं । डीहाइड्रो-पेप्टीडेज, फॉस्फेटेज और यूरीकेज नामक एन्जाइमों में यशद होता है । यशद का कैल्सियम के साथ भी सम्बन्ध है । कुछ जन्तुओं के आहार में यशद देना लाभप्रद सिद्ध हुआ है ।

वनस्पतिज और मांसज दोनों प्रकार के भोजनों में यशद व्यापक रूप से रहता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। इसलिये इसकी कमी के कारण विकार प्रायः उत्पन्न नहीं होते। घोंघों और कुछ अन्य सामुद्रिक भोजनों, यकृत, गेहूँ के अंकुर, यीस्ट और सलाद में इसकी मात्रा पर्याप्त होती है। एक लीटर दूध में दो से तीन मिलीग्राम यशद होता है।

12. मैंगनीज—

व्यक्तियों के पोषण के लिये मैंगनीज अनिवार्य है, यह बात बहुत समय से ज्ञात है। अन्य प्राणियों के पोषण के लिये भी यह आवश्यक है। हीमोग्लोबिन की रचना में मैंगनीज कार्य करता है। परन्तु इसके कार्य करने की प्रक्रिया अभी तक जानी नहीं जा सकी है। मैंगनीज द्वारा अनेक एन्जाइम— फॉस्फोग्लूकोम्यूटेज, हेक्सोकाइनेज आदि अधिक कार्यशील होते हैं। आर्जीनेज एन्जाइम को यह विशेष रूप से कार्यशील बनाता है।

मनुष्य के लिये मैंगनीज की मात्रा का अभी तक निश्चय नहीं किया जा सका है। सामान्यतः इसकी मात्रा 3 से 9 मिलीग्राम हो सकती है। वनस्पतियों और प्राणियों में मैंगनीज विस्तृत रूप से होता है, इसलिये इसकी कमी से विकार उत्पन्न होते दिखाई नही देते।

13. संखिया—

वनस्पतियों और जन्तुओं में संखिया भी विद्यमान रहता है। पहले यह समझा जाता था कि हीमोग्लोबिन की रचना में संखिया का भी योग है। परन्तु प्रयोगों द्वारा इस विचार की पुष्टि नहीं हुई। इसलिये इसको जन्तुओं के पोषण के लिये अनिवार्य नही समझा जाता।

14. ऐलुमिनियम—

वनस्पतियों और जन्तुओं के अवयवों में ऐलुमिनियम की अल्प मात्रायें विद्यमान रहती हैं। पहले यह समझा जाता था कि ऐलुमिनियम के बर्तनों में भोजन पकाने से और बेकिंग पाउडर में ऐलुमिनियम के लवणों के उपयोग से ऐलुमिनियम की विषाक्तता हो सकती है। परन्तु प्रयोगों से इस बात की पुष्टि नहीं हुई। ऐलुमिनियम की सामान्य मात्रा मनुष्यों या जन्तुओं पर हानिकर प्रभाव नहीं डालती। अध्ययनों से यह भी प्रतिपादित हुआ है कि ऐलुमिनियम आहार का अनिवार्य घटक नहीं है।

15. फ्लुओरीन—

फ्लुओरीन सूक्ष्म मात्राओं में अस्थियों और दान्तों में विद्यमान रहता है। सामान्यतः प्राणियों को यह खनिज पीने के पानी से प्राप्त होता है। दस लाख भाग जल में एक भाग फ्लुओरीन विद्यमान होने पर यह स्वास्थ्य के लिये लाभप्रद है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जल में फ्लुओरीन की मात्रा कम या अधिक होने पर इसका स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव होता है। चाय की पत्तियों में फ्लुओरीन की मात्रा प्रचुर होती है। 100 ग्राम पत्तियों में 175 मिलीग्राम तक फ्लुओरीन पाया गया है। चाय का क्वाथ पकाने पर इसका 80 प्रतिशत फ्लुओरीन जल में घुल जाता है।

शरीर की वृद्धि पर फ्लुओरीन का क्या प्रभाव है, इसको निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता। परन्तु इसका प्रभाव अस्थियों और दान्तों पर होता है, इस बात को सिद्ध किया गया है। जल में फ्लुओरीन की मात्रा कम होने पर इसकी कमी के लक्षण होते हैं और अधिक होने पर इसकी अधिकता के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

यह समझा जाता है कि फ्लुओरीन की कमी से दन्तक्षय होता है। यह देखा गया है कि जिन स्थानों के जल में फ्लुओरीन की मात्रा कम होती है, अर्थात् यह दस लाख भाग जल में 0.5 भाग या इससे भी कम होता है, वहाँ दन्तक्षय रोग अधिक होता है। यह भी देखा गया है कि जिन नगरों में दन्तक्षय रोग अधिक प्रचलित था, वहाँ के जल में फ्लुओरीन को मिलाने से इस रोग का प्रसार कम हो गया। अमेरिका और इंग्लैण्ड के नगरों में दन्तक्षय रोग के प्रसार को पीने के जल में फ्लुओरीन मिलाकर कम करने का सफल प्रयास किया गया है। जल मे फ्लुओरीन की इतनी मात्रा मिलाई जाती है कि 10 लाख भाग जल में एक भाग फलुओरीन हो जावे।

सोडियम फ्लुओराइड का प्रयोग दन्तक्षय की चिकित्सा के लिये भी किया गया है। दान्तों पर स्थानिक रूप से सोडियम फ्लुओराइड के 0.01 प्रतिशत घोल को दो वर्षों में 6 वार लगाने से दन्तक्षय में सुधार देखा गया है।

जल में फ्लुओरीन को मात्रा अधिक होने पर भी विकार उत्पन्न होते देखे गये हैं। इसका प्रभाव अस्थियों और दान्तों पर होता है दान्तों के प्रभावित होने पर दन्तकर्बुरण होता है। इस अवस्था में दान्तों पर दाने दाने से उभर आते हैं और दान्तों का विरञ्जन होता है या वे चाक के समान श्वेत हो जाते हैं। अस्थियो के प्रभावित होने पर अस्थिकर्बुरण होता है। इससे प्राय: सुषुम्ना की अस्थियाँ प्रभावित होती हैं। सुषुम्ना की अस्थियों की झिल्लियों और अस्थियों के मध्य का भाग कठोर हो जाता है तथा मनुष्य का गति करना कठिन हो जाता है।

जल में फ्लुओरीन की मात्रा के अधिक हो जाने पर वहाँ के पशु भी प्रभावित होते हैं। यह समस्या पंजाव और आन्ध्र प्रदेश में अधिक देखी गई है। इन स्थानों के पीने के जल में फ्लुओरीन की मात्रा को कम करके समस्या का समाधान करने का प्रयास किया गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

16. आयोडीन -

शरीर में आयोडीन का कार्य मुख्य रूप से गले के आगे के भाग में स्थित अवटु ग्रन्थि से सम्बन्धित है। अवटु ग्रन्थि थाइरॉक्सिन नामक हॉर्मोन को उत्पन्न करती है। यह ग्रन्थि आयोडीन और टाइरोसिन नामक ऐमिनो अम्ल का संयोजन करके इस हॉर्मोन को उत्पन्न करती है। शरीर की वृद्धि, विकास और कार्यों के संचालन के लिये थाइरॉक्सिन एक अनिवार्य हॉर्मोन है।

भोजन में आयोडीन की कमी हो जाने पर गलगण्ड नामक रोग उत्पन्न होता है। शरीर में आयोडीन की कमी हो जाने पर अवटु ग्रन्थि में थाइरॉक्सिन की उत्पत्ति कम हो जाती है। अब ग्रन्थि की कोशिकायें अधिक थाइरॉक्सिन बनाने का असफल प्रयास करती हैं। इस अवस्था में क्षति की पूर्ति के लिये इन कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि होती जाती है और ग्रन्थि का आकार बड़ा होता जाता है। अवटु ग्रन्थि के आकार का बड़ा हो जाना ही गलगण्ड रोग है। इस प्रकार शरीर में आयोडीन की कमी गलगण्ड रोग का कारण बनती है।

प्रयोगशालाओं में आयोडीन के इस प्रभाव के परीक्षण किये गये हैं। आयोडीन से रहित आहार को जन्तुओं को देकर देखा गया है कि उनमें गलगण्ड रोग उत्पन्न हुआ तथा आयोडीन से युक्त आहार देने पर रोग शान्त हो गया।

शरीर की सभी कोशिकाओं में आयोडीन विद्यमान रहता है। एक व्यक्ति के सारे शरीर में लगभग 50 मिलीग्राम आयोडीन होता है। इसकी सबसे अधिक मात्रा अवटु ग्रन्थि में रहती है। 25 ग्राम भार वाली इस छोटी सी ग्रन्थि में शरीर के कुल संचय का 1/5 भाग आयोडीन रहता है।

मनुष्य अपने लिये आयोडीन की आवश्यकता को जल में तथा अन्य खाद्य पदार्थों में विद्यमान आयोडीन से पूरा करता है। जिन प्रदेशों की भूमि में आयोडीन की मात्रा कम होती है, उनमें उत्पन्न होने वाली वनस्पतियों और जल में भी आयोडीन की मात्रा कम रहती है। उन वनस्पतियों तथा जल का उपयोग करने वाले मनुष्य आयोडीन की कमी से पीड़ित होते हैं तथा वहाँ गलगण्ड रोग अधिक फैलता है। पर्वतीय प्रदेशों में अधिक वर्षा के कारण भूमि का आयोडीन बह जाता है, तथा वहाँ के जल और वनस्पतियों में आयोडीन की कमी के कारण गलगण्ड रोग अधिक होता है।

भारतवर्ष में हिमालय पर्वत की तराई के प्रदेशों में, पंजाब, जम्मू और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काश्मीर, हिमाचल प्रदेश, बिहार, बंगाल, असम, नेफा, नागालैण्ड और मणिपुर में इस रोग का अधिक प्रसार है। यह अनुमान लगाया गया है कि इन स्थानों की लगभग 20 प्रतिशत जनता गलगण्ड से पीड़ित है।

गलगण्ड से पीडित स्थानों पर जल को आयोडिनीकृत करके इस रोग के प्रसार को रोका जा सकता है। इसका सबसे उत्तम उपाय आयोडिनीकृत नमक को देना है। आयोडीन की कमी वाले स्थानों पर रहने वाले व्यक्तियों द्वारा आयोडिनीकृत नमक का निरन्तर व्यवहार करने से गलगण्ड रोग का निश्चित रूप से निरोध होता है। गलगण्ड की चिकित्सा के लिये भी आयोडीन का प्रयोग वरदान सिद्ध हुआ है। गलगण्ड के रोगी यदि आयोडीन का नियमित प्रयोग करें, तो वे निश्चित रूप से लाभान्वित हो सकते हैं।

प्रयोगों द्वारा यह देखा गया है कि भोजन में उपस्थित विशेष पदार्थ अवटु ग्रन्थि के कार्य में बाधा डालते हैं और थाइरॉक्सिन के निर्माण में आयोडीन का उपयोग नहीं होने देते। पत्तागोभी आदि पदार्थ इसी प्रकार के हैं। थायोयूरिया और यूरेसिल नामक रासायनिक द्रव्य भी यह कार्य करते हैं।

पशुपालन उद्योग में आयोडीन की महत्वपूर्ण उपयोगिता सिद्ध हुई है। आयोडिनीकृत आहार देने से गौयें अधिक दूध देती हैं, इस आहार से सांडों की कामवासना में वृद्धि होती है और उनकी प्रजनन शक्ति बढ़ जाती है। सूअरों की वृद्धि में तथा मुर्गियों के अधिक अण्डे देने में भी आयोडिनीकृत आहार उपयोगी है।

मनुष्य के शरीर को प्रतिदिन सामान्य रूप से 0·15 से 0·3 मिलीग्राम आयोडीन चाहिये। यदि किसी स्थान के जल या मिट्टी में आयोडीन कम हो तो वहाँ के निवासियों की आयोडीन की आवश्यकता आयोडिनीकृत नमक से पूरी की जा सकती है। इसके लिये नमक में 0·02 प्रतिशत पोटैशियम आयोडेट मिलाया जाता है। पहले इस कार्य के लिये आयोडाइड मिलाया जाता था। परन्तु यह लवण अधिक समय तक रखा रहने पर नष्ट हो जाता है। इसलिये इस समय आयोडेट का प्रयोग किया जा रहा है।

नमक को आयोडिनीकृत करने के सम्बन्ध में अनेक देशों में कानून बनाये गये हैं। स्विटजरलैण्ड और अमेरिका में आयोडिनीकृत नमक देने के लिये सरकारी नियम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं। भारतवर्ष में भी गलगण्ड वाले क्षेत्रों में आयोडिनीकृत नमक देने के लिये कानून बनाये गये हैं।

अनेक प्राकृतिक पदार्थों में आयोडीन प्रचुर मात्रा में होता है। समुद्री मछलियों, समुद्री घासों और समुद्री नमक में आयोडीन की पर्याप्त मात्रा होती है। समुद्री घास को सुखाकर तथा जला कर उसकी राख का उपयोग गलगण्ड की चिकित्सा के लिये सफलतापूर्वक किया गया है। काड मछली का तेल, अण्डे, बकरी का दूध, प्याज और हरी वनस्पतियों में आयोडीन पर्याप्त मात्रा में मिलती है।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरा अध्याय

विटामिनों का महत्व और अन्वेषण

भोजन के छः पोषक घटकों में विटामिनों का विशिष्ट महत्व है। विटामिन शरीर के अंगों की कोशिकाओं की रचना नहीं करते और नाहीं वे शक्ति या ताप उत्पन्न करते हैं। तो भी शरीर की वृद्धि, विकास एवं स्वास्थ्य के लिये विटामिनों को भोजनों में उचित मात्रा में अनिवार्य रूप से होना चाहिये। शरीर को विटामिनों की बहुत बड़ी मात्रा की आवश्यकता नहीं है तथा इनकी अल्प मात्रा की ही शरीर को आवश्यकता होती है। तथापि भोजन में इनका उपस्थित रहना अनिवार्य है। एक अच्छे सन्तुलित भोजन में सभी विटामिनों की समुचित मात्रा रहनी चाहिये।

विटामिनों के अन्वेषण का संक्षिप्त इतिहास

विटामिनों की खोज का इतिहास बहुत पुराना न होने पर भी रोचक और ज्ञानवर्धक है। इस इतिहास को बहुत विस्तार से कहना इस स्थल पर अनावश्यक ही है। इसे अति संक्षेप से यहाँ बताया जा रहा है, जो कि सामान्य जन के लिये रुचिकर है।

पोषण के विज्ञान का अध्ययन करते हुए यह देखा गया कि सभी तत्वों से भरपूर भोजन करने पर भी हरे फलों, सब्जियों आदि के अभाव में प्राणियों के शरीर की पूरी वृद्धि नहीं होती और उनके स्वास्थ्य पर इसका हानिकर प्रभाव पड़ता है। अन्वेषकों ने देखा कि प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, खनिज और जल के अतिरिक्त कुछ और भी पदार्थ ऐसे हैं, पोषण के लिये जिसकी आवश्यकता है।

पुराने समय में १७-१८वीं शताब्दी में लम्बी समुद्री यात्रा करने वाले नाविकों में स्कर्वी नामक रोग का प्रसार बहुत अधिक था और इससे स्वास्थ्य की हानि तथा जीवन के विनाश की अनेक घटनायें होती थीं। स्कर्वी रोग से रक्षा करने के लिये अंग्रेजों ने सबसे पहले अपने नाविकों के भोजन में नींबू को सम्मिलित किया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इससे नाविकों के स्कर्वी रोग के निरोध में आशातीत सफलता प्राप्त हुई। अंग्रेजी नाविक अपने जहाजों में नींबू के टोकरे ले जाने लगे। इस कारण उनको लिमीज भी कहा जाने लगा (अंग्रेजी में नींबू को लेमन कहा जाता है)। इस घटना से वैज्ञानिकों ने यह निष्कर्ष निकाला कि नींबुओं में कोई ऐसा पदार्थ है, जो स्कर्वी रोग का निरोध करता है। १७४७ ईसवी में इंग्लैण्ड के लिन्ड नामक वैज्ञानिक ने यह अन्वेषण किया था कि यदि नाविकों के आहार में नींबू को सम्मिलित कर दिया जावे तो स्कर्वी रोग का निरोध किया जा सकता है। विटामिन C के स्कर्वीरोधी गुण के अन्वेषण का यह प्रथम प्रयास था।

जापानी नौसेना के नाविक बेरी-बेरी रोग से बहुत अधिक पीडित होते थे। 1880 ई० में टाकाकी नामक वैज्ञानिक ने जापानी नौसेना के भोजन में सुधार किया। दैनिक भोजन में मांस और सब्जियों की मात्रायें बढ़ाई गईं। इसके साथ वाष्पित दूध भी सम्मिलित किया गया। भोजन में इस सुधार का नाटकीय प्रभाव हुआ। इसके बाद जापानी नौसेना में बेरी-बेरी रोग बहुत कम फैला।

संसार के उन प्रदेशों में, जहाँ पालिशदार चावल खाया जाता है, बेरी-बेरी रोग का प्रसार बहुत अधिक होता है। सन् 1897 ई० में जावा में नियुक्त एक डच वैज्ञानिक आइकमैन ने चूजों पर परीक्षण करके यह निष्कर्ष निकाला कि भोजन में पालिशदार चावल को अधिक मात्रा में देने से बेरी-बेरी रोग बढ़ता है। उसने चूजों के दो वर्ग लिये। एक वर्ग को पालिशदार चावल के ऊपर रखा गया। कुछ समय बाद उसमें बेरी-बेरी रोग के लक्षण प्रकट होने लगे। दूसरे वर्ग को बिना पालिश के चावल देने से यह रोग प्रकट नहीं हुआ। पहले वर्ग को चावल के ऊपर की सतह का हिस्सा खिलाने से रोग के लक्षण ठीक होने लगे। इससे उसने यह निष्कर्ष निकाला कि चावल की ऊपरी सतह में कोई विशेष पोषक तत्त्व है, जो चावल को पालिश करने से निकल जाता है, तथा यह तत्त्व बेरी-बेरी रोग का निरोध करता है।

अंग्रेज वैज्ञानिक फ्रेडरिक होपकिन्स (1906 ई०) ने भोजन के सम्बन्ध में चूहों पर परीक्षण किये। उसने चूहों को विशुद्ध प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा और खनिज भोजन में दिये। परन्तु वे चूहे कुछ ही दिनों में मर गये। इसके बाद होपकिन्स ने चूहों के एक दूसरे वर्ग के भोजन में कुछ दूध को सम्मिलित किया। वे चूहे स्वस्थ रहे। इससे उसने यह निष्कर्ष निकाला कि प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा और खनिज के अतिरिक्त भोजन में कुछ और पोषक तत्त्व हैं, जो शरीर की वृद्धि और स्वस्थता के लिये अनिवार्य है। उसने इन तत्त्वों को सहायक कारक नाम दिया। बाद में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मैककालम ने ऐसे भोजनों को संरक्षक भोजन कहा। इसके बाद यह खोज हुई कि भोजनों में यह संरक्षक-सक्रियता विटामिनों के कारण हैं।

फन्क नामक एक वैज्ञानिक ने कबूतरों और दूसरे छोटे जन्तुओं पर परीक्षण किये। उसने उनमें उत्पन्न किये गये बेरी-बेरी रोग की चिकित्सा के लिये चावल के ऊपर से सक्रिय अवयव को पृथक् करने का प्रयत्न किया। अनेक प्रक्रियाओं के अनन्तर उसने एक स्फटिकीय पदार्थ प्राप्त किया, जो अत्यल्प मात्रा में देने पर भी बेरी-बेरी रोग को ठीक करता था। इसी प्रकार के स्फटिकीय पदार्थ को उसने यीस्ट से भी पृथक् किया। यह पदार्थ जीवन के लिये अनिवार्य था और रासायनिक रचना में एमाइन प्रतीत होता था। इसलिये फन्क ने इस पदार्थ को वाइटामिन नाम दिया। बाद में इस शब्द की रोमन स्पेलिंग वाइटामिन (Vitamine) शब्द से E को हटा कर सभी सहायक कारकों का नाम विटामिन (Vitamine) रखा गया।

इसके बाद भी पोषण विज्ञान पर कार्य करने वाले वैज्ञानिक अपने अन्वेषणों में निरन्तर प्रयास करते रहे। 1913 ई० में संयुक्त राज्य अमेरिका के वैज्ञानिक ई० बी० मककालम ने अध्ययन करके यह निष्कर्ष निकाला कि दूध में दो प्रकार के वृद्धि प्रेरक तत्त्व हैं। इनमें एक तत्त्व तो मक्खन में रहता है और दूसरा वसा से रहित भाग में रहता है। पहले को उसने वसाविलेय ए और दूसरे को जलविलेय बी नाम दिया। उसके इस अन्वेषण के परिणामस्वरूप विटामिनों के बाद में वसाविलेय और जलविलेय दो वर्ग किये गये।

भोजन के इन पोषक घटकों, विटामिनों के सम्बन्ध में इसके बाद भी वैज्ञानिक निरन्तर खोज करते रहे। अब तक अनेक विटामिनों की खोज की जा चुकी है। कौन से विटामिन किन भोजनों में मिलते हैं, शरीर पर उनके क्या प्रभाव हैं, उनके अभाव में कौन से विकार उत्पन्न हो सकते हैं, और उनकी कितनी मात्रा मनुष्य के शरीर के लिये आवश्यक है, इन विषयों पर बहुत अधिक अन्वेषण किये जा चुके हैं। अलग अलग विटामिनों के विवेचन में इन बातों पर विस्तार से विचार किया जावेगा।

विटामिन क्या है, इसकी निश्चित रूप से परिभाषा करना कठिन है। इसका कोई विशेष क्रियात्मक मूल्य भी नहीं है। यहाँ इतना कह देना आवश्यक है कि प्राणी के शरीर की वृद्धि एवं स्वास्थ्य के लिये विटामिनों की निश्चित अनिवार्य आवश्यकता होती है। शरीर की उपापचयात्मक प्रक्रियों को बनाये रखने के लिए विटामिनों का होना अनिवार्य है। विटामिनों के पर्याप्त मात्रा में न मिलने पर शरीर की वृद्धि रुक जाती है और अनेक प्रकार के रोग उत्पन्न हो सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर को विटामिनों की उपलब्धि

प्राणियों को विटामिनों की प्राप्ति मुख्यतः भोजनों द्वारा होती है। सन्तुलित आहार से वे सभी विटामिन शरीर को समुचित मात्रा में प्राप्त हो जाते हैं, जो शरीर की वृद्धि, विकास और स्वस्थता को बनाये रखने के लिये अनिवार्य हैं। यह ध्यान रखना योग्य है कि प्राणियों की सभी विटामिनों की आवश्यकतायें भोजन से ही पूरी नहीं होतीं। शरीर स्वयं भी कुछ विटामिनों का संश्लेषण करके अपनी आवश्यकताओं को पूरा करता है। उदाहरण के लिये, प्राकृतिक भोजनों में विटामिन D बहुत कम होता है। सूर्य के प्रकाश से त्वचा का स्पर्श होने पर किरणीयन द्वारा विटामिन D का संश्लेषण होता है, तथा इससे शरीर की विटामिन D की आवश्यकता पूरी हो जाती है।

प्राणियों के शरीर की आन्तों में विटामिन K का और विटामिन B संमिश्र वर्ग की विटामिनों का संश्लेषण होता है। आंतों में विशेष प्रकार के जीवाणु होते हैं, जो इन विटामिनों का संश्लेषण करके इनकी आवश्यकता की पूर्ति करते हैं। शरीर की आवश्यकता का लगभग ८० प्रतिशत निकोटिनिक अम्ल आन्तों में ही बन जाता है। विटामिन B_{12} का आन्तों में संश्लेषण शरीर की आवश्यकता से बहुत अधिक होता है तथा इसका बहुत सा अंश विष्ठा के साथ बाहर निकल जाता है।

जब लम्बे समय तक प्रतिजीवी ओषधियाँ मुख द्वारा रोगी को दी जाती हैं, तो ये ओषधियाँ आन्तों में विद्यमान उन जीवाणुओं को भी नष्ट कर देती हैं, जो विटामिनों का संश्लेषण करते हैं। इस कारण आन्तों में आवश्यकता के अनुरूप विटामिनों का संश्लेषण नहीं हो पाता और विटामिनों की न्यूनता हो सकती है। इसलिये चिकित्सकों को यह ध्यान रखना चाहिये कि इन औषधियों को देने के साथ-साथ विटामिन B संमिश्र को भी देते रहें।

अनेक बार रोगों के कारण या अन्य कारणों से शरीर को विटामिनों की आवश्यकता भोजनों द्वारा पूरी नहीं हो पाती। उन अवस्थाओं में विटामिनों को औषधि के रूप में देते रहना चाहिये। शिशुओं को, गर्भवती स्त्रियों को, दूध पिलाने वाली स्त्रियों को विटामिनों की अधिक आवश्यकता होती है। अनेक बार ऐसा भोजन मिलता है; जिसमें समुचित मात्रा में विटामिन नहीं होते। ऐसा भी हो सकता है कि आन्तें रोगी हों और वे रोग के कारण विटामिनों का अवशोषण न कर सकें। इस कारण भी अनेक बार शरीर में विटामिनों की कमी हो जाती है। इन सभी अवस्थाओं में शरीर को विटामिनों की अतिरिक्त मात्राओं की आवश्यकता होती है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और उनकी यह आवश्यकता विटामिन प्रकल्पनों को मुख द्वारा या इन्जेक्शन द्वारा देकर पूरी करनी चाहिये ।

विटामिनों का संश्लेषण

मनुष्यों को विटामिनों की प्राप्ति सामान्य रूप से अपने भोजनों से होती है। परन्तु वर्तमान युग में पोषण विज्ञान ने बहुत अधिक उन्नति की है। प्रत्येक विटामिन की रासायनिक रचना को जान लिया गया है तथा इन विटामिनों का कृत्रिम रूप से संश्लेषण कर लिया गया है। सबसे पहले 1932 ई० में संयुक्त राज्य अमेरिका के सी० जी० किंग ने विटामिन D का व्यापारिक रूप से संश्लेषण किया था और इस प्रकार बड़ी मात्रा में विटामिनों के संश्लेषण के मार्ग को खोल दिया था। इस समय प्राय: सभी विटामिनों का संश्लेषण बड़ी मात्राओं में किया जा रहा है और विश्व की जनता को सभी विटामिनें प्रचुर मात्राओं में उपलब्ध हैं।

विटामिनों का कृत्रिम रूप से संश्लेषण किये जाने से अनेक लाभ हुये हैं। विटामिनों के प्राकृतिक स्रोत अति अल्प हैं और उनसे विटामिनों की सभी आवश्यकतायें पूरी नहीं की जा सकतीं। 20 मिलीग्राम विटामिन B_{12} को उपलब्ध करने के लिये एक टन यकृत की आवश्यकता होती है। आज विश्व में लाखों ग्राम विटामिन B_{12} का प्रयोग होता है। इसको प्राकृतिक साधनों से प्राप्त करना असम्भव ही है। संश्लिष्ट विटामिनें अधिक शुद्ध, स्थायी और क्षमतायुक्त होती हैं। इनका स्वाद और गन्ध भी प्राकृतिक विटामिनों की अपेक्षा अधिक ग्राह्य है। विटामिनों का संश्लेषण हो जाने से सबसे अधिक लाभ यह हुआ कि इसका मूल्य बहुत कम हो गया। 1949 ई० में प्रथम बार बाजार में संश्लिष्ट विटामिन A आई थी। 1949 ई० की अपेक्षा 1964 ई० में इस विटामिन का मूल्य उस समय के मूल्य की अपेक्षा 12 गुणा कम था।

विटामिनों का वर्गीकरण

पहले कहा जा चुका है कि संयुक्त राज्य अमेरिका के वैज्ञानिक ई० बी० मैककालम ने दूध में दो प्रकार के वृद्धिप्रेरक तत्त्वों का पता लगाया था— वसाविलेय ए और जलविलेय बी। इसी आधार पर वैज्ञानिकों ने विटामिनों को दो वर्गों में विभक्त किया—वसाविलेय विटामिनें और जलविलेय विटामिनें। वैज्ञानिकों ने परीक्षण करके यह निष्कर्ष निकाला कि मैककालम के वसाविलेय ए और जलविलेय बी अनेक घटकों के मिश्रण थे। वे एक ही पदार्थ नहीं थे। इन घटकों को पृथक् करके इनकी रासायनिक रचना जान ली गई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वसाविलेय विटामिनें चार हैं—

(1) विटामिन A
(2) विटामिन D
(3) विटामिन E
(4) विटामिन K

जलविलेय विटामिनें तीन प्रकार की है—

(1) विटामिन B संमिश्र
(2) विटामिन C या ऐस्कॉर्बिक अम्ल
(3) विटामिन P

विटामिन B संमिश्र अनेक विटामिनों का समूह है। इनकी रासायनिक रचना और गुण अलग-अलग हैं। अब तक इस समूह के अनेक घटकों को जाना जा सका है। ज्ञात घटक निम्न हैं—

(1) थायामिन या विटामिन B_1
(2) रिबोफ्लेविन या विटामिन B_2
(3) निकोटिनिक अम्ल या नियासिन
(4) पैन्टोथिनिक अम्ल
(5) पिरिडॉक्सिन या विटामिन B_6
(6) बायोटिन
(7) फोलिक अम्ल
(8) इनोसिटोल
(9) कोलिन
(10) पैरा-ऐमिनो-बेन्जोइक अम्ल
(11) साइनोकोबालेमिन या विटामिन B_{12}

वसाविलेय विटामिनों और जलविलेय विटामिनों में मुख्य अन्तर निम्न हैं—

1. वसाविलेय विटामिनें वसा में घुलती हैं और जलविलेय विटामिनें जल में घुलती हैं।
2. वसाविलेय विटामिनों का शरीर में अवशोषण वसा (चिकनाई के पदार्थ) की उस्थिति में होता है तथा शनैः शनैः होता है।
3. वसाविलेय विटामिनें शरीर में बहुत समय तक संचित रह सकती हैं। शरीर में आवश्यकता से अधिक मात्रा में पहुँचने पर ये संचित हो जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

4. एक बार में इनको अधिक मात्रा में लेने पर कुछ समय तक इनके विना भी रहा जा सकता है। शरीर में इनकी न्यूनता तभी अनुभव होती है; जबकि इनको बहुत समय तक न लिया जावे।
5. जलविलेय विटामिनों का अवशोषण जल की उपस्थिति में होता है तथा ये वसाविलेय विटामिनों की अपेक्षा जल्दी अवशोषित होती हैं।
6. अधिक मात्रा में लेने पर जलविलेय विटामिनों का तुरन्त उत्सर्जन हो जाता है तथा शरीर में इनका संचय नहीं होता। इस कारण इनको भोजन में प्रतिदिन लेना आवश्यक है।
7. जलविलेय विटामिनों के भोजनों में न होने पर या कम होने पर इनकी न्यूनता का अनुभव बहुत शीघ्र होने लगता है।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चौथा
अध्याय

वसाविलेय विटामिनें

जैसाकि पिछले अध्याय में बताया जा चुका है कि विटामिनों को दो वर्गों में बांटा गया है— वसाविलेय विटामिनें और जलविलेय विटामिनें। वसा में घुल जाने वाली विटामिनें वसाविलेय विटामिनें कहलाती हैं और जल में घुलने वाली जलविलेय। यहाँ वसा से अभिप्राय चिकनाई वाले पदार्थ हैं। अंग्रेजी में इसको फैट कहते हैं। ये वसायें वनस्पतिज और जान्तव दोनों प्रकार की हो सकती हैं। परन्तु जान्तव वसाओं में ये विटामिनें अधिक होती हैं। वसाविलेय विटामिनें चार हैं— विटामिन A, विटामिन D, विटामिन E और विटामिन K।

विटामिन A

वसाविलेय विटामिनों में सबसे पहले विटामिन A की खोज की गई थी। शरीर में यह विटामिन विभिन्न प्रकार के कार्य करती है। शरीर की वृद्धि और विकास के लिये इसका होना अनिवार्य है। जन्तुओं के पोषण, वृद्धि और विकास के लिये तथा उनमें जीने की क्षमता को बनाये रखने के लिये वैसे तो सभी विटामिनों का होना अनिवार्य है, तथापि विटामिन A का अधिक विशेष महत्त्व है। वृद्धि के लिये अनिवार्य होने के कारण इस विटामिन को वृद्धिप्रेरक विटामिन भी कहा जाता है।

विटामिन A का अन्वेषण चूहे आदि जन्तुओं पर विशिष्ट भोजनों के प्रयोगों द्वारा किया गया था। इन प्रयोगों में यह देखा गया कि शरीर के पोषण, वृद्धि, विकास, रोगों का निरोध करने की क्षमता, प्रजनन क्रिया, त्वचा और उपकलाओं की स्वस्थता आदि को बनाये रखने के लिये शरीर को यह विटामिन अनिवार्य रूप से प्राप्त होना चाहिये। देखने की शक्ति को बनाये रखने के लिये भी विटामिन A

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अनिवार्य है। विटामिन A के अभाव में अनेक रोग हो सकते हैं और रोगप्रतिरोधक क्षमता कम होकर अनेक जीवाणुओं का संक्रमण हो सकता है।

विटामिन A के कार्य और उसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

शरीर पर विटामिन A के कार्यों के सम्बन्ध में बहुत अधिक खोज की जा चुकी है। इस विटामिन के प्रमुख कार्य और इसकी कमी से उत्पन्न लक्षण इस प्रकार हैं—

1. **वृद्धि**— शरीर की वृद्धि और विकास के लिये विटामिन A अनिवार्य है। इसके कम होने पर जन्तुओं की वृद्धि रुक जाती है। विटामिन A के बिलकुल न मिलने पर मृत्यु हो सकती है। इसकी अल्प मात्राओं के मिलने पर जन्तु जीवित तो रह सकता है, परन्तु उसकी वृद्धि नहीं होती और उसमें विटामिन की कमी के अन्य लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं।

2. आँखें— आँखों के ठीक प्रकार से कार्य कर सकने के लिये विटामिन A का मिलना अनिवार्य है। देखने के लिये दृष्टिपटल विटामिन A का उपयोग करता है और इसको खर्च करता है। इस विटामिन की कमी से आँखों के अनेक रोग हो सकते हैं। इनमें सबसे प्रारम्भिक लक्षण रतौंधी है। इसके बाद जीरोसिस हो जाता है और स्वच्छमण्डल मृदु हो जाता है। कार्निया पर छोटे-छोटे जखम होकर व्यक्ति अन्धा हो जाता है। आँखों से पस से युक्त स्राव बह सकता है। आँखों की ग्रन्थियों की वाहिनियों में संक्रमण होकर इनका अवरोध हो सकता है। बच्चों में विटामिन A की कमी के कारण शुष्क अक्षिपात प्रायः देखा जाता है।

भारतवर्ष में विशेष रूप से दक्षिण भारत में रतौंधी के रोगी प्रायः देखने में आते हैं। उनके इस रोग का कारण भोजन में विटामिन A की कमी है। इस विटामिन की कमी से अन्धेरे में देखने की क्षमता कम हो जाती है तथा तीव्र प्रकाश से मन्द प्रकाश में आने के बाद आँखों की अनुकूलन क्षमता कम हो जाती है।

आँखों के दृष्टिपटल में विटामिन एक विशिष्ट प्रोटीन के साथ मिश्रित रूप में रहता है। दृष्टिपटल में विटामिन A रैटीनिन कहलाता है तथा वहाँ ऑप्सीन नाम की प्रोटीन होती है। रैटीनिन और ऑप्सीन के मिलने से रोडॉप्सीन पदार्थ बनता है। यह एक रञ्जक पदार्थ है। प्रकाश में देखने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर रोडॉप्सीन का विरञ्जन होता है और उस समय यह ऑप्सीन तथा रैटीनिन में विश्लेषित हो जाता है। प्रकाश जितना अधिक तीव्र होता है, रोडॉप्सीन का उतना ही अधिक खर्च होता है। अच्छी प्रकार से प्रकाशित स्थान से अंधेरे स्थान में या मन्द प्रकाश के स्थान में आने पर प्रारम्भ में जो देखने में कठिनाई होती है, उसका कारण रोडॉप्सीन का खर्च हो जाना है। धीरे-धीरे रैटीनिन और ऑप्सीन के मिश्रित होने से रोडॉप्सीन का पुनः संश्लेषण होता है। इससे व्यक्ति के देखने की सामर्थ्य वापिस आने लगती है। रोडॉप्सीन का संश्लेषण जितना शीघ्र होता है, देखने के सामर्थ्य भी उतना ही शीघ्र वापिस आती है। इस प्रकार अनुकूलतम दृष्टि के लिये दृष्टिपटल में पर्याप्त रोडॉप्सीन का रहना आवश्यक है। विटामिन A की कमी होने पर रैटीनिन भी कम हो जाती है। इस कारण अन्धकार में देखने की क्षमता कम हो जाती है। भारतवर्ष में निर्धनता के कारण विटामिन A की भोजन में प्रायः कमी रहती है, इसलिये रतौंधी रोग का प्रसार अधिक है।

इसी प्रकार विटामिन A की कमी रंगों के ज्ञान में प्रत्यक्ष रूप से बाधा डालती है। इसकी कमी से रंगों का प्रत्यक्ष ज्ञान क्षीण हो जाता है।

3. **त्वचा और उपकला**— त्वचा को स्वस्थ बनाये रखने के लिये विटामिन A अनिवार्य है। इसकी कमी से त्वचा शुष्क और रूखी हो जाती है। इस विकार का कारण यह है कि त्वचा के अन्दर की ग्रन्थियों के स्राव कम हो जाते हैं। त्वचा में फुंसियाँ हो सकती है। इससे उत्पन्न रोग को कैरीटिनोसिस कहते हैं।

शरीर के सभी छिद्रों और गुहिकाओं पर उपकला का आवरण होता है। मुख, जीभ, ग्रासनली, स्वरयन्त्र, श्वसनपथ, फुपफुस आदि उपकलाओं से ढके होते हैं। उपकलाओं को स्वस्थ रखने के लिये तथा उसमें उत्पन्न होने वाले स्रावों को बनाये रखने के लिये विटामिन A का प्राप्त होना आवश्यक है। इस विटामिन की कमी होने पर उपकला का स्राव बन्द हो जाता है तथा वे शुष्क और कठोर हो जाती हैं।

4. **प्रजनन क्रिया** — प्रजनन क्रिया पर भी विटामिन A का प्रभाव है। चूहों पर परीक्षण करके देखा गया है कि इस विटामिन की कमी से नर चूहों की प्रजनन की सामर्थ्य समाप्त हो गई और मादा चूहों का मदचक्र बना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं रह सका। विटामिन A की मात्रा अत्यल्प होने पर बच्चे तो उत्पन्न हो सकते हैं, परन्तु वे या तो मरे हुये पैदा होते हैं या पैदा होकर जल्दी मर जाते हैं। गर्भ के पोषण के लिये भी यह विटामिन अनिवार्य है।

5. **संक्रमण**— विटामिन A शरीर में संक्रमणरोधी क्षमता उत्पन्न करती है, इसलिये इस विटामिन को संक्रमणरोधी विटामिन भी कहा जाता है। इस विटामिन की क्षमता किसी विशिष्ट संक्रामक रोग के प्रति नहीं है, यह सामान्य प्रतिरक्षा को बढ़ाता है।

6. **अस्थियाँ और दान्त**— विटामिन A की कमी होने पर अस्थियों की वृद्धि कम हो जाती है और दान्तों का विकास ठीक प्रकार से नहीं हो पाता। अनेक बार अस्थियों और दान्तों की असामान्य रूप से वृद्धि होने लगती है। विटामिन A के देने पर ये विकार ठीक हो जाते हैं।

7. कुछ वैज्ञानिकों का विचार है कि विटामिन A की कमी से कैल्सियस फॉस्फेट की मूत्राश्मरी उत्पन्न हो सकती है। इस विटामिन की कमी के कारण जननमूत्र पथ की उपकला का कैरेटिनीकरण होकर उपकला की कोशिकायें झड़ने लगती हैं। इसके बाद जीवाणुओं का संक्रमण होकर मूत्र क्षारीय हो जाता है। इससे कैल्सियम फॉस्फेट अवक्षिप्त होने लगते हैं। इस अवस्था में विटामिन A और अम्ल-भस्मीय भोजन उपयोगी होते हैं।

8. **भोजन का पाचन** भोजन के पाचन में, विशेष रूप से कार्बोहाइड्रेटों के पाचन में विटामिन A विशेष रूप से सहायक होता है। ट्रायोजों को ग्लूकोज में परिणत करने के लिये विटामिन A प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से भाग लेता है।

विटामिन A का शरीर में अवशोषण और उत्सर्जन—

विटामिन A का अवशोषण छोटी आन्त से होता है। यह विटामिन लसीका तन्त्र द्वारा अवशोषित होकर रुधिर के प्लाज्मा में एस्टर के रूप में प्रकट होता है। विटामिन A के वसाविलेय होने से इसका अवशोषण धीरे-धीरे होता है तथा इसका शरीर से उत्सर्जन भी जल्दी नहीं होता। यह यकृत में प्रचुर मात्रा में संचित हो सकता है। कुछ समय तक इस विटामिन के न मिलने पर भी शरीर इस संचय को उपयोग में ला सकता है और विटामिन की कमी का अनुभव तुरन्त नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन A के प्राकृतिक स्रोत—

यद्यपि मनुष्य को विटामिन A वनस्पति और जन्तु इन दोनों स्रोतों से प्राप्त है, तथापि यह विटामिन स्वयं में केवल प्राणिज स्रोतों से उपलब्ध है। कुछ विशिष्ट वनस्पतियों और फलों में कैरोटिन नामक एक तत्त्व है, जिसको प्राणी अपने शरीर में विटामिन A में परिणत कर लेते हैं। कैरोटिन को विटामिन A का पूरोवर्ती भी कहा जाता है।

विटामिन A का सबसे समृद्ध स्रोत समुद्री मछलियाँ हैं। कुछ समुद्री मछलियाँ— शार्क, काड, हेलीबुट और स्वोर्ड फिश के यकृत के तेलों में इस विटामिन की मात्रा बहुत अधिक होती है। कुछ तेलों के नमूनों में दस लाख यूनिट विटामिन A प्रति ग्राम मिला है। भारतवर्ष में शार्क और हेलीबुट मछलियों के तेलों का उत्पादन विटामिन A की प्राप्ति के लिये व्यापारिक तौर प्रचुर मात्रा में किया जा रहा है।

दूध, मक्खन, घी, अण्डे और जन्तुओं के यकृत विटामिन A के समृद्ध स्रोत हैं। दूध से मक्खन को अलग कर देने पर उसमें विटामिन A नहीं रहता। बच्चों को दिये जाने वाले सूखे दूध को विटामिन A से समृद्ध करना उचित है। सरकारी कानून के अनुसार जमाये हुये वनस्पति तेलों में प्रति आउन्स में 750 यूनिट विटामिन A मिलाया जाना चाहिये। अनेक वनस्पति तेल निर्माता इसमें प्रति आउन्स में 50 यूनिट विटामिन D भी मिलाते हैं।

कुछ वनस्पतियों को विटामिन A का समृद्ध स्रोत कहा जाता है। वस्तुतः इनमें विटामिन A नहीं होता, किन्तु इसका पूरोवर्ती कैरोटिन होता है। प्राणियों के शरीर कैरोटिन को विटामिन A में परिणत करने में समर्थ होते हैं। परीक्षण करके देखा गया है कि कैरोटिन को विटामिन A में परिणत करने के लिये इन्सुलिन की आवश्यकता है। यही कारण है कि मधुमेह के रोगी कैरोटिन को उचित मात्रा में विटामिन A में परिणत नहीं कर पाते। वनस्पतियों में विटामिन A (कैरोटिन) की उपस्थिति हरी पत्तियों और पीले, नारंगी तथा लाल रंग के फलों में अधिक होती है। भारतवर्ष में शाकाहारी व्यक्तियों के भोजन में ये पदार्थ विटामिन A के प्रमुख स्रोत है। बथुआ, पालक, राई, सलाद, मूली के पत्ते और अन्य हरे पत्ते, गाजर, आम, पपीता आदि फलों में कैरोटिन प्रचुर मात्रा में होती है। वनस्पति तेलों में विटामिन A प्राय नहीं होता। केवल पाम के तेल में यह प्रचुर है। 100 ग्राम पाम के तेल में इसकी मात्रा 10000 यूनिट होती है। परन्तु कई नमूनों में यह मात्रा 65000 से 113000 यूनिट तक पाई गई है। भोजनों को पकाने से यह विटामिन बहुत कम नष्ट होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निम्न तालिका में विटामिन A के प्रमुख स्रोत दिये जा रहे हैं—

भोजन	प्रति 100 ग्राम भोजन में विटामिन A के यूनिट
दूध—	
गाय	184
भैंस	160
बकरी	182
मानव-स्त्री	137
मक्खन	3200
घी	2000
अण्डा मुर्गी का	2200
भेड़ का यकृत	22300
पत्ता गोभी	2000
बथुआ	9200
चौलाई के पत्ते	10120
मूली के पत्ते	18660
गाजर	3150
हरी मिर्च	712
बेर पका हुआ	2380
आम पका हुआ	4800
पपीता पका हुआ	1100
टमाटर पका हुआ	585
सन्तरा	320
बाजरा	220
मक्का पीला	150
गेहूँ	108
चना	316
मसूर	450
जीरा	870
धनिया	1570
पाम का तेल	10000
शार्क मछली के यकृत का तेल	120000 प्रति ग्राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैलीबुट मछली के यकृत का तेल	87000 प्रति ग्राम
काड मछली के यकृत का तेल	2000 प्रति ग्राम
स्वोर्डफिश मछली के यकृत का तेल	250000 प्रति ग्राम

ये मात्रायें औसतन हैं। किन्हीं नमूनों में इससे अधिक और किन्हीं में इससे कम विटामिन A हो सकता है।

विटामिन A के कृत्रिम स्रोत—

विटामिन A का संश्लेषण भी किया जा सकता है। संश्लिष्ट विटामिन A 1949 ई० में पहली बार बाजार में आया था। यह बाजार में प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। यह कैप्सूलों, गोलियाँ, कणिकाओं, इन्जेक्शनों आदि के रूप में बाजार में मिलता है। संश्लिष्ट विटामिन A में मछली के तेल के स्वाद और गन्ध के न होने से अनेक व्यक्ति इसको प्राकृतिक स्रोत की अपेक्षा अधिक पसन्द करते हैं। अनेक देशों में सरकारी कानूनों के अनुसार बच्चों के भोजनों में और अन्य विशिष्ट भोजनों में संश्लिष्ट विटामिन A को मिलाया जाता है। यह संश्लिष्ट विटामिन A एसीटेट और पाल्मिटेट के रूप में बनाया जाता है।

विटामिन A की आवश्यकतायें और उनकी पूर्ति—

65 किलोग्राम भार वाले व्यक्ति को 5000 यूनिट विटामिन A प्रतिदिन मिलना चाहिये। औसतन एक भारतीय को 3000 से 4000 यूनिट विटामिन A की प्रतिदिन आवश्यकता होती है। शिशुओं को कम से कम 1500 यूनिट विटामिन A चाहिये। आयु के बढ़ने के साथ-साथ विटामिन A की आवश्यकता भी बढ़ती जाती है। 10 वर्ष के बालक को 3000 से 4000 यूनिट विटामिन A की आवश्यकता होती है। गर्भावस्था और स्तन्यपान की अवधि में स्त्रियों को औसत मात्रा से अधिक विटामिन ए चाहिये। गर्भावस्था में 6000 से 7000 और स्तन्यपान की अवधियों में 8000 यूनिट विटामिन A की सिफारिश की गई है। शरीर में विटामिन A की कमी होने पर उत्पन्न होने वाले लक्षणों में 100000 यूनिट तक इसको दिया जा सकता है। निम्न तालिका में विटामिन A की आवश्यकतायें स्पष्ट की गई हैं—

आयु और अवस्था	विटामिन A की मात्रा प्रतिदिन की यूनिटों में
एक वर्ष का शिशु	1500
चार से पाँच वर्ष का बालक	2500

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नौ से दस वर्ष का बालक	3000 – 4000
वयस्क पुरुष या स्त्री	5000
स्त्री-गर्भावस्था में	6000 – 7000
स्त्री-बच्चों को दूध पिलाते समय	8000

एक मिलीग्राम विशुद्ध विटामिन A 3300 यूनिट के बराबर होता है।

भारतवर्ष में सामान्य व्यक्ति को विटामिन A उचित मात्रा में नहीं मिल पाता। इस देश में दूध, हरी सब्जियाँ और फल कम उपलब्ध हैं तथा मंहगे हैं। निर्धन व्यक्ति या सामान्य आय के व्यक्ति इन वस्तुओं को खरीदने में असमर्थ हैं। आहार में वसा की कमी के कारण विटामिन A के कम प्राप्त होने से अनेक बार अतिसार हो जाता है। इस कारण उपलब्ध विटामिन A का भी शरीर अवशोषण नहीं कर पाता।

अतिविटामिनता—

विटामिन A को उचित और आवश्यक मात्रा में ही लेना चाहिये। बहुत अधिक मात्रा में लेने से विषैले लक्षण उत्पन्न हो सकते हैं। इससे मेरु तरल दाब में वृद्धि होकर सिरदर्द, मतली, वमन और तन्द्रा उत्पन्न होते हैं। इस विटामिन की अत्यधिक मात्रा लेने पर बच्चों की मृत्यु होती देखी गई है। दस लाख यूनिट विटामिन A की एक मात्रा लेने पर ये लक्षण कुछ घण्टों में उत्पन्न हो जाते हैं। यदि एक लाख यूनिट विटामिन A को प्रतिदिन कुछ दिनों तक लिया जावे तो अरुचि, त्वचा में सूखी खुजली, गंजापन, होठों का चटखना और अस्थियों में दर्द, ये लक्षण उत्पन्न होते हैं। विटामिन A की मात्रा को कम करने पर ये लक्षण ठीक हो जाते हैं।

विटामिन D

विटामिन D का मुख्य कार्य सूखा रोग का निरोध करना है। इसलिये इस विटामिन को सूखा रोधी विटामिन भी कहा जाता है। इंगलैण्ड और विश्व के अन्य भागों में निर्धन वर्ग के बालकों में सूखा रोग का प्रसार बहुत अधिक रहा। यह भी देखा गया कि जिन प्रदेशों में कोहरा अधिक फैलता है और धूप कम प्राप्त होती है, वहाँ इस रोग का प्रसार अधिक हुआ।

सूखा रोग की चिकित्सा के लिये रोगी को काड मछली का तेल एवं धूप का सेवन कराना बहुत समय से प्रचलित था। इन सब विश्वासों के लिये पहले कोई यथार्थ वैज्ञानिक कारण उपस्थित नहीं किये जा सके थे। परन्तु अब विश्वासों की

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यथार्थता वैज्ञानिक अन्वेषणों द्वारा सिद्ध की जा चुकी है। निर्धन वर्ग के बालकों को विटामिन युक्त आहार न मिलने तथा त्वचा में विटामिन D उत्पन्न करने वाली सूर्य की धूप न मिलने से शरीर में विटामिन D की कमी हो जाती है और इस कमी के कारण सूखा रोग उत्पन्न होता है। काड मछली के तेल में विटामिन D प्रचुर मात्रा में होती है और सूर्य की धूप त्वचा को स्पर्श करके बिटमिन D उत्पन्न करती है। इस प्रकार शरीर के लिये विटामिन D की उपलब्धि होकर सूखा रोग की चिकित्सा हो जाती है।

विटामिन D के सूखा रोग रोधी गुण के लिये अनेक परीक्षण और अन्वेषण किये गये हैं। यह देखा गया है कि दूध, गेहूँ के प्रकंल्पन, मक्खन आदि की अपेक्षा काड मछली के तेल में सूखा रोग का निरोध करने की शक्ति अधिक है। यह भी देखा गया है कि त्वचा पर परावैंगनी किरणों का प्रयोग करने से सूखा रोग का निरोध हो जाता है। इन परीक्षणों से सिद्ध हुआ कि काड मछली के तेल में कोई विशिष्ट पदार्थ है और वह पदार्थ त्वचा पर परावैंगनी किरणों के स्पर्श होने पर भी उत्पन्न होता है। यह पदार्थ सूखा रोग का निरोध करता है। वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि यह सूखा रोधी पदार्थ विटामिन D है।

मैककालम ने यह बताया था कि काड मछली के तेल में एक वसाविलेय ए नामक तत्त्व हैं, जो सूखा रोग को रोकता है। बाद के परीक्षणों से पता लगा कि यह वसाविलेय ए नामक सक्रिय तत्त्व कुछ तत्त्वों का मिश्रण है। मैंककालम और उसके साथियों ने इस वसाविलेय ए में से विटामिन A और विटामिन D को पृथक् किया। इसके बाद परीक्षणों द्वारा उसने यह सिद्ध किया कि विटामिन D सूखा रोग का निरोध करता है। यह ताप से नष्ट नहीं होता।

वैज्ञानिकों ने यह भी देखा कि अनेक स्टेरोलों-अर्गोस्टेरोल और कालेस्टेरोल पर पराबैंगनी किरणों का किरणीयन करने से उनमें सूखा रोग को रोकने की शक्ति उत्पन्न होती है। किरणीयन किये गये अर्गोस्टेरोल से क्रिस्टलीय विटामिन D को पृथक् किया गया तथा इसे कैलसीफेरोल या विटामिन D_2 नाम दिया गया। त्वचा में ७–डीहाइड्रोकोलेस्टेरोल नामक पदार्थ होता है, जो सूर्य की किरणों के या पराबैंगनी किरणों के स्पर्श से विटामिन D को उत्पन्न करता है। इस विटामिन D को विटामिन D_3 नाम दिया गया।

मनुष्यों के लिये ये दोनों ही प्रकार के विटामिन D उपयोगी हैं तथा विटामिन D के गुणों को उत्पन्न करते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन D एक वसाविलेय तत्त्व है, जो विशिष्ट मछलियों के तेलों में प्रचुर मात्रा में होता है। दूध, अण्डे की जर्दी, मक्खन आदि में भी यह होता है परन्तु अल्प मात्रा में। जन्तुओं को इसकी अधिकांश प्राप्ति सूर्य की किरणों से होती है।

विटामिन D के कार्य और उसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

विटामिन D का सबसे प्रमुख कार्य पाचन तन्त्र द्वारा कैल्सियम और फॉस्फोरस के अवशोषण में सहायता करना और उनको अस्थियों एवं दान्तों में निक्षिप्त करना है। विटामिन D के अभाव में अस्थियों का मजबूत बनना सम्भव नहीं है। इस विटामिन की कमी से अस्थियों वृद्धि की गति मन्द हो जाती है और इस कारण शरीर की वृद्धि की गति भी कम हो जाती है।

विटामिन D के कम होने पर विष्टा द्वारा कैल्सियम और फॉस्फोरस का उत्सर्जन बढ़ जाता है। यदि इस अवस्था में विटामिन D दिया जाये तो विष्ठा द्वारा कैल्सियम और फॉस्फोरस का उत्सर्जन कम हो जावेगा और इनका अधिक अवशोषण होकर शरीर को इन तत्त्वों की अधिक प्राप्ति होगी। इस प्रकार विटामिन D द्वारा रक्त में कैल्सियम और फॉस्फोरस की मात्रा बढ़ जावेगी और अस्थियों के निर्माण के लिये ये खनिज शरीर को अधिक मात्रा में उपलब्ध होंगे। इससे उनमें कैल्सीभवन की प्रक्रिया में वृद्धि होगी।

सूखा रोग अल्पवयस्कों का रोग है, जबकि अस्थियाँ बढ़ रही होती हैं। इस रोग में रुधिर का कैल्सियम का स्तर और फॉस्फोरस का स्तर घट जाता है। विटामिन D की कमी के कारण कैल्सियम और फॉस्फोरस का अवशोषण कम होता है। रुधिर में इन खनिजों की कमी हो जाने से अस्थियों को इन तत्त्वों की प्राप्ति भी घट जाती है। इसके अतिरिक्त रक्त के कैल्सियम के स्तर को पूरा करने के लिये अस्थियों का कैल्सियम उपयोग में आता है। इससे लम्बी अस्थियों में कैल्सियम के कम हो जाने से वे टेढी हो जाती हैं और झुक जाती हैं। गुल्फ, जानु, मणिबन्ध आदि सन्धियाँ मोटी हो जाती हैं। पर्शुकाओं के जोड़ उभरे दिखाई देते हैं और कपाल की आकृति विकृत हो जाती है। दान्त देर से निकलते हैं, विकृत होते हैं और इनका उचित विकास नहीं होता। ये पतले होते हैं, इनमें इनेमल बहुत कम होता हैं तथा इनमें गढ़े और दरारें हो जाती हैं। इन दान्तों में जीवाणुओं का संक्रमण बहुत शीघ्र हो सकता है। जैसे-जैसे यह सूखा रोग बढ़ता जाता है, अस्थियों का खनिज अंश कम होता जाता है।

बच्चों में रुधिर के कैल्सियम स्तर के बहुत कम हो जाने पर टिटैनी रोग के लक्षण प्रकट होने लगते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन अवस्थाओं में विटामिन D के देने पर निश्चित लाभ होता है। इस विटामिन के द्वारा सूखा रोग से पीड़ित अस्थि (रैकिटिक अस्थि) में कैल्सियम के अवक्षेपण (कैल्सीभवन) में वृद्धि होती है। रुधिर में कैल्सियम के स्तर को सन्तुलित करने में परावटु हॉर्मोन का विशेष महत्त्व है। यह हॉर्मोन मूत्र में फॉस्फेट के उत्सर्जन को बढ़ाकर प्लाज्मा में उसके स्तर को कम कर देता है। दूसरी बात यह है कि विटामिन D के कम होने पर परावटु हॉर्मोन अस्थि से कैल्सियम को निकाल कर उस स्तर को सामान्य बनाये रखता है। हॉर्मोन के अधिक मात्रा में उत्पन्न हो जाने पर रुधिर में कैल्सियम का स्तर बढ़ जाता है और यह अस्थियों में कम हो जाता है।

अस्थिमृदुता वयस्कों का रोग है। यह रोग स्त्रियों को और विशेष कर उन स्त्रियों को, जिनके कई बच्चे हो चुके हों और जो बहुत समय तक बच्चों को दूध पिलाती रही हों, अधिक होता है। गर्भावस्था में एवं स्तन्यपान के समय आहार में कैल्सियम और विटामिन D की कमी के कारण, उन स्त्रियों को कैल्सियम प्राप्त नहीं होता। इस अवस्था में यदि सूर्य का प्रकाश भी पूरी तौर पर उपलब्ध न हो तो त्वचा में भी विटामिन उत्पन्न नहीं होता। ऐसी अवस्था में जो कैल्सियम आहार में मिलती भी है, उसका भी पूरा अवशोषण नहीं हो पाता। इस समय बच्चों का पोषण करने के लिये इनकी अस्थियों के कैल्सियम का उपयोग होता है, क्योंकि इनके रुधिर में कैल्सियम का अंश अत्यल्प रहता है। इन स्त्रियों को कैल्सियम की पूरी प्राप्ति न होने पर इनके रक्त का कैल्सियम का स्तर कम हो जाता है और परावटु ग्रन्थि अधिक सक्रिय हो जाती है। यह ग्रन्थि हॉर्मोन को अधिक उत्पन्न करती है और यह हॉर्मोन अस्थियों से कैल्सियम को खींचकर रुधिर में लाता है, जिससे इन स्त्रियों की अवस्था और भी खराब हो जाती है। अस्थिमृदुता से पीड़ित स्त्रियों को प्रत्येक गर्भावस्था में इस रोग का आक्रमण होता है तथा पिछली गर्भावस्था की अपेक्षा अगली गर्भावस्था में इस रोग का आक्रमण अधिक तीव्र होता है। यही कारण है कि गर्भवती स्त्रियों और दूध पिलाने वाली स्त्रियों को कैल्सियम की अधिक आवश्यकता होती है।

विटामिन D के स्रोत—

सूर्य के प्रकाश से त्वचा का किरणीयन इस विटामिन की उपलब्धि का सबसे उत्तम साधन है। सूर्य की पराबैंगनी किरणों के त्वचा से स्पर्श होने पर विटामिन D का संश्लेषण होता है। गरम देशों में जहाँ सूर्य का प्रकाश प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है, तथा जहाँ कपड़े भी अधिक नहीं पहने जाते, इस विटामिन की कमी नहीं होनी चाहिये। तथापि बड़े शहरों में औद्योगीकरण के कारण तथा आबादी के घना होने के कारण उचित मात्रा में धूप नहीं मिलने पाती। स्त्रियाँ और बच्चे कारखानों के अन्दर,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहाँ कि धूप नहीं पहुँचती, दिन में बहुत समय तक कार्य करते हैं तथा सूर्य के प्रकाश से वञ्चित रहते हैं। अनेक प्रदेशों में गाँवों में स्त्रियों को और बच्चों को अनेक कारणों से बहुत अधिक समय तक घरों के अन्दर रहना पड़ता है तथा वहाँ के घर खिड़कियों आदि के अभाव में धूप से वञ्चित रहते हैं। उनको जो विटामिन D बिना किसी मूल्य के मिल सकती थी, वह नहीं मिलती। विटामिन D की इस प्राकृतिक उपलब्धि के लिये सूर्य की पर्याप्त धूप मिलनी चाहिये।

प्राकृतिक भोजन, चाहे वे जान्तव हों या वनस्पतिज, विटामिन D के उत्तम स्रोत नहीं हैं। दूध में अण्डे की जर्दी में, मक्खन और पनीर में यद्यपि विटामिन D होता है, परन्तु वह बहुत कम होता है। अन्नों और अन्य वनस्पतियों में यह विटामिन इससे भी कम होता है।

मछलियों के यकृत के तेलों में, जैसे— काड, हैलीबुट आदि के यकृत के तेलों में विटामिन D की प्रचुर मात्रायें होती हैं। परन्तु ये तेल मनुष्य के भोजन के नियमित अंश नहीं हैं तथा इनका प्रयोग औषधि के रूप में ही किया जाता है। निम्न तालिका में कुछ मछलियों के यकृत के तेलों में विटामिन D की मात्रा दिखाई गई है :—

नाम मछली	विटामिन D के यूनिट प्रति ग्राम तेल में
शार्क	5 से 15
हैलीबुट	1000 से 5000
एलबाको रटूना	25000 से 250000
स्वोर्डफिश	2000 से 25000
काड	85 से 500

प्राकृतिक रूप से प्राप्त होने वाली विटामिन D के अतिरिक्त विटामिन D के अनेक प्रकल्पन भी व्यापारिक रूप से प्राप्त है। कैल्सीफेरोल युक्त वनस्पति तेल बाजार में मिलते हैं। दूध को किरणीयन करके बच्चों को दिया जा सकता है। यीस्ट का किरणीयन करने से उनमें बहुत अधिक मात्रा में विटामिन D संश्लिष्ट हो जाता है। इस यीस्ट को मनुष्यों के अतिरिक्त अधिक दूध देने वाले पशुओं को भी खिलाया जाता है। इससे उनके दूध में विटामिन D का अंश अधिक हो जाता है।

अनेक देशों में, जैसे संयुक्त राज्य अमेरिका में बच्चों को दिये जाने वाले दूध को और दूध के चूर्ण को विटामिन D द्वारा सम्पूरित करके दिये जाने का नियम है। भारतवर्ष में अनेक कम्पनियाँ जमाये गये वनस्पति तेलों में 50 यूनिट विटामिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

D प्रति आउन्स तेल में मिलाती हैं। परन्तु विटामिन D के ये स्रोत निर्धन जनता के लिये सुलभ नहीं हैं।

विटामिन की आवश्यकता और उसकी पूर्ति—

अस्थियों और दान्तों की रचना के लिये विटामिन D की अनिवार्य आवश्यकता होती है। इसलिये बढ़ते हुए बालकों को यह विटामिन निश्चित रूप से मिलनी चाहिये। शिशुओं और बालकों के लिये प्रतिदिन 400–800 यूनिट विटामिन D की सिफारिश की गई है। किशोर अवस्था में, स्त्रियों को गर्भावस्था में और बच्चों को दूध पिलाते समय अतिरिक्त विटामिन D की आवश्यकता होती है। भारतीय चिकित्सा अनुसंधान संस्था ने उसके लिये भी प्रतिदिन 400–800 यूनिट विटामिन D की सिफारिश की है।

सामान्यतः वयस्क स्त्री-पुरुषों को अतिरिक्त विटामिन D की स्पष्ट रूप में आवश्यता नहीं होती। सूर्य की धूप से और भोजनों से जो विटामिन D उपलब्ध होती है, उसके द्वारा ही वे कैल्सियम और फॉस्फोरस के सन्तुलन को बनाये रखते हैं। परन्तु जो व्यक्ति रात में काम करते हैं, अधिक समय तक घरों में रहते हैं, इस प्रकार के वस्त्र पहनते हैं कि सूर्य की धूप उनको न लगे, उनको विटामिन D पूरी तरह से नहीं मिल पाती। ऐसे व्यक्तियों को अतिरिक्त विटामिन D लेनी चाहिये।

विशुद्ध एक ग्राम स्फटिकीय विटामिन D में 40000 यूनिट विटामिन होती है।

अतिविटामिनता—

विटामिन D को बहुत अधिक मात्रा में लेना हानिप्रद हो सकता है। अधिक मात्रा में लेने पर यह वसाविलेय विटामिन शरीर में संचित हो जाती है तथा आवश्यकता से अधिक विटामिन का उत्सर्जन नहीं होता।

विटामिन D की अधिक मात्रा के परीक्षण छोटे जन्तुओं पर किये गये हैं। इससे उनकी आन्तों में कैल्सियम और फॉस्फोरस का अवशोषण अधिक हुआ और इन खनिजों का स्तर रुधिर में अधिक हो गया। इससे विभिन्न अंगों में कैल्सीभवन देखा गया।

मनुष्यों पर परीक्षण करने से अधिक स्पष्ट प्रभाव परिलक्षित नहीं हुए। तथापि विटामिन D को अधिक मात्रा में देने पर देखा गया कि शिशुओं की वृद्धि मन्द हो गई। कुछ ऐसे भी केस देखे गये हैं, जबकि इस विटामिन को भूल से या जान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बूझ कर अधिक मात्रा में ले लिया गया। इससे उनमें भूख का न लगना, उबकाई आना, तन्द्रा आदि लक्षण उत्पन्न होते देखे गये। विटामिन D का सेवन बन्द करने पर वे लक्षण ठीक हो गये।

विटामिन E

विटामिन E भी वसाविलेय विटामिन है। इसको वन्ध्यतारोधी विटामिन या प्रजनन विटामिन भी कहा जाता है। पुरुषों में प्रजनन शक्ति को उत्पन्न करने के लिये इसका उपयोग बहुत समय से किया जाता रहा है। स्त्रियों में वन्ध्यता को दूर करने के और गर्भपात को रोकने के लिये भी इसका प्रयोग किया जाता रहा है। मनुष्यों में इस विटामिन के निश्चित प्रयोगात्मक परिणाम अभी तक यद्यपि निर्धारित नहीं किये जा सके हैं, तथापि इसका प्रयोग उपरोक्त प्रयोजनों के लिये चिकित्सक करते आ रहे हैं।

विटामिन E का प्रजनन के कार्य पर निश्चित प्रभाव छोटे जन्तुओं पर परीक्षण करके निर्धारित किया जा चुका है। 1922 ई० में विशप नामक वैज्ञानिक ने चूहों पर प्रयोग करके यह देखा कि भोजनों में एक विशेष प्रकार का तत्त्व है, जो प्रजनन के लिये उपयोगी है। भोजनों में अन्य तत्त्वों के होने पर भी इस तत्त्व के न होने पर प्रजनन नहीं होता। इस कारक का नाम विटामिन E रखा गया। परीक्षण करके यह भी देखा गया कि इस विटामिन के न होने पर खरगोश की पेशियों में क्षीणता आने लगी। बहुत समय से चिकित्सक इन दोनों कार्यों के लिये इस विटामिन को मनुष्यों को देते रहे हैं।

अनेक वनस्पतियों में और प्राणियों के शरीर के अवयवों में विटामिन E होता है। इस विटामिन की सक्रियता से युक्त यौगिकों को टोकोफेरोल कहा जाता है। अब तक सात प्रकार के टोकोफेरोल खोजे जा चुके हैं। ये टोकोफेरोल निम्न हैं—

α—टोकोफेरोल (ऐल्फा)
β—टोकोफेरोल (बीटा)
γ—टोकोफेरोल (गामा)
γ—टोकोफेरोल (जीटा)
ϵ—टोकोफेरोल (एप्सीलोन)
λ—टोकोफेरोल (ईटा)
δ—टोकोफेरोल (डेल्टा)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शुद्ध टोकोफेरोल तेलीय होते हैं तथा वसाविलेय हैं। इनके विशुद्ध क्रिस्टलीय एस्टर भी बनाये जा चुके हैं।

ऑक्सीजन की अनुपस्थिति में विटामिन E असाधारण रूप से ताप को सहन कर लेता है। परन्तु वायु की उपस्थिति में ताप से यह नष्ट हो जाता है। क्षार का संयोग भी इसको नष्ट कर देता है। वायु की उपस्थिति में प्रकाश के और विशेष रूप से पराबैंगनी किरणों के स्पर्श से इस विटामिन का बहुत शीघ्र विनाश हो जाता है।

टोकोफेरोलों की रासायनिक रचना को जान लिया गया है और α—टोकोफेरोल का संश्लेषण किया जा चुका है। यह विटामिन E का बहुत शक्तिशाली सान्द्रण है।

शरीर में विटामिन E के कार्य और इसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

सभी वैज्ञानिक इस तथ्य से सहमत हैं कि मनुष्यों को विटामिन E की आवश्यकता होती है। परन्तु इसकी कमी से पीड़ित रोगियों की संख्या अत्यल्प है। इस कारण इसकी कमी से उत्पन्न लक्षणों को ठीक प्रकार से प्रतिपादित नहीं किया जा सका है।

विटामिन E मनुष्य के शरीर के प्रत्येक अवयव में विद्यमान रहता है। प्राकृतिक भोजनों में और सस्ते अनाजों में इसकी प्रचुर मात्रा होती है। इसलिये इसकी आहार-जन्य कमी प्रायः नहीं होती। यदि इसकी कभी कमी होती भी है तो अन्य पोषक घटकों की कमी से उत्पन्न होने वाले लक्षण पहले प्रकट होते हैं।

विटामिन E का मुख्य कार्य प्रजनन शक्ति को बनाये रखना बताया गया है। यद्यपि विटामिन E की प्रजनन शक्ति को बनाये रखने की क्षमता के सम्बन्ध में मनुष्यों पर परीक्षण नहीं किये गये, तथापि इस प्रकार के परीक्षण चूहों पर विशेष रूप से किये गये हैं। मादा चूहों में विटामिन E की कमी होने पर उनके मदचक्र तथा प्रजनन प्रक्रिया में विकार उत्पन्न हो जाते हैं। यदि गर्भ धारण हो भी जावे तो आठ या दस दिन बाद भ्रूण सूखने लगता है या गर्भपात हो जाता है या भ्रूण की मृत्यु भी हो सकती है। विटामिन E का सेवन कराने पर स्वस्थ बच्चों का जन्म होता है। नर चूहों में इस विटामिन की कमी उत्पन्न करने पर उनकी अण्ड ग्रन्थियाँ छोटी हो जाती हैं तथा इनका क्षय होने लगता है। कुछ समय बाद उनमें प्रजनन शक्ति समाप्त हो जाती है। उनकी पेशियों में क्षय देखा जा सकता है।

विटामिन E का पोषण से भी सम्बन्ध है। खरगोशों पर परीक्षण करके देखा गया कि इस विटामिन के न मिलने पर उनकी पेशियों का पोषण नहीं होता। इसके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ ही उसके मूत्र में से क्रियाटिन नामक तत्व अधिक मात्रा में निकलता है। विटामिन E के देने पर मूत्र में से क्रियाटिन का उत्सर्जन कम हो जाता है और पेशियों का पोषण होने लगता है। विटामिन E की कमी होने पर मनुष्यों में भी पेशियों के दुष्पोषण के लक्षण उत्पन्न होने लगते हैं।

जीवरासायनिक रूप से विटामिन E एक ऑक्सीकररोधी तत्व है। यह शरीर में विटामिन A की रक्षा करता है। टोकोफेरोल निश्चित रूप से भोजन के विटामिन A की रक्षा करते हैं एवं उसको नष्ट होने से बचाते हैं। शरीर में पर्याप्त मात्रा में विटामिन E होने पर विटामिन A की आवश्यकता कम हो जाती है।

विटामिन E के स्रोत—

विटामिन E (टोकोफेरोल) सबसे अधिक वनस्पति तेलों में पाये जाते हैं। गेहूँ के अंकुर के तेल में यह विटामिन सबसे अधिक सान्द्रित रूप में होता है। मक्का के तेल और बिनौले के तेल में इससे कम तथा मछली के तेल में बहुत कम विटामिन E होता है। दालों, गिरियों, फलियों, मटर और हरी पत्ती वाली सब्जियों में यह विटामिन प्रचुर है। सलाद विटामिन E का उत्तम स्रोत है। जन्तुओं के अंगों में यद्यपि यह कम है तथापि यकृत में सबसे अधिक रहता है। विटामिन E की दृष्टि से जान्तव भोजन इसके अच्छे स्रोत नहीं हैं।

विटामिन E की आवश्यकता—

मनुष्य को विटामिन E की कितनी आवश्यकता है, इसका अभी निश्चित निर्धारण नहीं किया जा सका है। छोटे जन्तुओं में इस विटामिन की आवश्यकता स्पष्ट निर्धारित कर देने पर भी मनुष्यों के लिये प्रतिपादित आँकड़े सर्वसम्मत नहीं हैं। तथापि मनुष्यों के लिये प्रतिदिन 25 से 30 मिलीग्राम टोकोफेरोल की मात्रा की सिफारिश की गई है। गर्भावस्था में इसकी आवश्यकता अधिक हो सकती है। चिकित्सा के लिये विटामिन E की मात्रा का निर्धारण रोगी की अवस्था के अनुसार किया जा सकता है।

विटामिन K

विटामिन K चौथी वसाविलेय विटामिन है। रुधिर के आतंचन (जमाने) के लिये यह विटामिन सहायक कारक है। रुधिर में प्रोथ्रोम्बिन नामक एक पदार्थ होता है। यह पदार्थ यकृत में बनता है तथा इसको बनाने के लिये यकृत को विटामिन K की आवश्यकता होती है। वायु के सम्पर्क में आने पर रुधिर को जमाने के लिये प्रोथ्रोम्बिन चाहिये। इस प्रकार विटामिन K यकृत में प्रोथ्रोम्बिन की उत्पत्ति का कारण बनकर रुधिर का आतंचन करता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन K की खोज अनेक परीक्षणों के उपरान्त की गई है। इस विटामिन का आविष्कार डेन्मार्क के एक वैज्ञानिक डाम ने किया था। उसने विवरण दिया है कि विशेष संश्लिष्ट राशनों पर, जिनमें हरी सब्जियाँ नहीं थीं, रखे गये चूजों में रक्तस्राव की प्रवृत्ति हुई तथा उनके रुधिर का आतंचन होने की अवधि लम्बी हो गई। कुछ समय के बाद उसने और उसके सहयोगियों ने अल्फाल्फा के पत्तों से एक वसाविलेय पदार्थ पृथक् किया, जो रक्त को उचित अवधि में आतञ्चित करने के लिये उपयोगी सिद्ध हुआ। इस पदार्थ को आतंचन विटामिन नाम दिया गया। इसको संक्षेप में विटामिन K कहा गया है।

विटामिन K एक वसाविलेय पदार्थ है। इसकी कमी होने पर रुधिर में प्रोथ्रोम्बिन की मात्रा कम हो जाती है। इससे रुधिर के आतंचन की अवधि बढ़ जाती है तथा रक्तस्राव की प्रवृत्ति होती है।

शरीर में विटामिन के कार्य K और उसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

प्रोथ्रोम्बिन रुधिर का एक सामान्य घटक है, जो रुधिर को वायु के सम्पर्क में आने पर जमा देता है। यकृत में प्रोथ्रोम्बिन की उत्पत्ति के लिये विटामिन K का होना अनिवार्य है। विटामिन K की अल्पता होने पर रुधिर का आतंचन या तो नहीं होता या देर से होता है और रक्तस्राव की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। शरीर के विभिन्न अंगों से रक्तस्राव की प्रवृत्ति होने पर विटामिन K को दिये जाने से स्पष्ट रूप से लाभ होता है।

अनेक बार ऐसा होता है कि यकृत की क्षति होने पर या कोई रोग होने पर प्रोथ्रोम्बिन का यकृत में संश्लेषण कम हो जाता है। इस अवस्था में प्रोथ्रोम्बिन का संश्लेषण कम होने में विटामिन K की न्यूनता कारण नहीं है। इस प्रकार के रक्तस्राव में विटामिन K को देने पर कोई लाभ नहीं होता।

डाइकूमेरोल और वारफेरीन नामक दो औषधियाँ हैं, जो विटामिन K की विरोधी हैं और आतंचन को रोकती हैं। इसलिये कुछ विशेष प्रकार के शल्यकर्मों में तथा हृदय के विकारों में इन औषधियों का प्रयोग आतंचन को रोकने के लिये किया जाता है।

विटामिन K की प्राप्ति खाद्य पदार्थों से तो होती ही है, बड़ी आन्त्र में स्थित कुछ जीवाणु भी इसका संश्लेषण करते हैं। इस प्रकार वे इस विटामिन की आवश्यकता को पूरा करते हैं। आन्त्र से विटामिन K का अवशोषण पित्त द्वारा होता है। यदि पित्त की उपलब्धि पर्याप्त न हो, जैसा कि अवरोधात्मक कामला में होता है, तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन K का अवशोषण नहीं होता और इसके अल्प हो जाने से विविध प्रकार के रक्तस्रावों की प्रवृत्ति होती है।

नवजात शिशु में विटामिन K नहीं होता, क्योंकि माता से भ्रूण को इस विटामिन का संभरण तुरन्त सुलभ नहीं है। इस कारण उस शिशु में रक्तस्राव की प्रवृत्ति हो सकती है। परन्तु यह अवस्था बहुत शीघ्र ठीक हो जाती है। शिशु की आन्त्र में विटामिन K को उत्पन्न करने वाले जीवाणु शीघ्र उत्पन्न हो जाते हैं और उसकी विटामिन की आवश्यकता को पूरा कर देते हैं। तथापि प्रसूति क्रियाओं में यह सामान्य रिवाज हो गया है कि प्रसव से ठीक पूर्व स्त्री को तथा प्रसव होने के बाद नवजात शिशु को विटामिन K दे दिया जाता है।

विटामिन K के स्रोत—

वनस्पतियों में विटामिन K व्यापक रूप से पाया जाता है। हरी पत्तियों वाली सब्जियों, पालक, गाजर, टमाटर और सोयाबीन के तेल में यह विटामिन प्रचुर होता है। इस विटामिन का संश्लेषण मछलियों के आहार और चावल के भूसे से भी किया गया है। स्वस्थ मनुष्य की बड़ी आन्त में विद्यमान जीवाणु इसका संश्लेषण करते हैं। मनुष्य विटामिन K की सम्पूर्ण आवश्यकता को इस स्रोत से पूरा कर लेते हैं, परन्तु आन्त्र में इस विटामिन का अवशोषण पित्त की उपस्थिति में ही होता है।

आन्त्र में विटामिन K के संश्लेषण को प्रतिजीवी औषधियाँ रोकती हैं। प्रतिजीवी औषधियों को देने पर इस विटामिन का संश्लेषण करने वाले जीवाणु नष्ट हो जाते हैं, इसलिये विटामिन का संश्लेषण भी रुक जाता है। इस कारण इन औषधियों के प्रयोग के साथ-साथ हरी सब्जियों को देते रहना चाहिये।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पाँचवा अध्याय

जलविलेय विटामिनें

पहले कहा जा चुका है कि विटामिनों के मुख्य रूप में दो वर्ग हैं— वसाविलेय और जलविलेय। जल में घुल जाने वाली विटामिनें जलविलेय विटामिनें कहलाती हैं। ये विटामिनें तीन वर्गों में बाँटी जा सकती हैं— विटामिन B संमिश्र, विटामिन C और विटामिन P।

विटामिन B संमिश्र

विटामिन B संमिश्र अनेक विटामिनों का समूह है। इस वर्ग में अब तक 11 विटामिनों की खोज की जा चुकी है। यद्यपि इन विटामिनों के शारीरिक कार्य और रासायनिक रचना बहुत भिन्न हैं, तथापि इनको एक वर्ग में इसलिये रख दिया गया है, क्योंकि ये सब यकृत, यीस्ट या अन्य इसी प्रकार के उत्तम स्रोत से जलविलेय विटामिनों के रूप में एक साथ पाई जाती हैं। पहले मैककालम और कैनेडी नामक वैज्ञानिकों ने इस सम्पूर्ण वर्ग को विटामिन B नाम दिया था। इसके बाद थायामिन को विटामिन B_1 तथा शेष को विटामिन B_2 संमिश्र कहा जाने लगा। बाद में इस वर्ग के अनेक घटकों के कार्यों और रासायनिक रचनाओं की खोज करके इनको विशुद्ध रूप में पृथक् किया गया और उनको पृथक्-पृथक् नाम दिये गये। ये नाम प्रायः इस प्रकार से रखे गये कि इनमें कुछ न कुछ उनकी रासायनिक प्रकृति का बोध हो सके। विटामिन B संमिश्र वर्ग में निम्नलिखित विटामिनों की खोज की जा चुकी है—

1. विटामिन B_1 या थायामिन या एन्यूरिन
2. विटामिन B_2 या रिबोफ्लेविन
3. निकोटिनिक अम्ल या नियासिन
4. पैन्टोथीनिक अम्ल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

5. विटामिन B_6 या पिरिडॉक्सिन
6. बायोटिन
7. फोलिक अम्ल या टेरोइलग्लूटैमिक अम्ल
8. इनोसिटोल
9. कोलिन
10. पैराऐमिनोबेन्जोइक अम्ल
11. विटामिन B_{12} या सायनोकोबालेमिन

विटामिन B संमिश्र वर्ग की विटामिनों की कमी अलग-अलग प्रायः नहीं होती। एक के साथ दूसरी विटामिनों की भी कमी होती है तथा इस वर्ग की विटामिनों को एक साथ संमिश्र के रूप में लेना चाहिये। अगर वस्तुतः किसी एक विटामिन की कमी हो तो उस संमिश्र में उस विटामिन की विशेष मात्रा मिलाई जा सकती है। इस वर्ग की विभिन्न विटामिनों का वर्णन निम्न प्रकार से किया जा रहा है—

1. B_1 विटामिन (थायामिन)

विटामिन B संमिश्र की विटामिनों में थायामिन, रिबोफ्लेविन और नियासिन का अधिक महत्व है। इन तीनों के सम्बन्ध में अधिक खोज की गई है तथा इनकी कमी से उत्पन्न रोगों और लक्षणों को सुस्पष्ट निर्धारित किया गया है। B संमिश्र की अन्य विटामिनें प्रायः मिश्रित आहारों में उपलब्ध हो जाती हैं और इनकी कमी नहीं होती। विटामिन B_{12} आहारों में प्रायः नहीं होती तथा शरीर के लिये आवश्यक विटामिन का आन्तों में संश्लेषण होता है।

थायामिन या विटामिन B_1 को बेरी-बेरी रोधी विटामिन के रूप में जाना जाता है। इसको एन्यूरिन या तन्त्रिकाशोथरोधी विटामिन भी कहा गया है।

पहले कहा जा चुका है कि टाकाकी नामक जापानी वैज्ञानिक ने जापानी नौ सैनिकों के आहारों में सुधार करके उसमें मांस, सब्जियाँ और वाष्पित दूध को सम्मिलित करके बेरी-बेरी रोग का निरोध किया था। आइकमैन ने चूहों पर परीक्षण करके निष्कर्ष निकाला था कि चावलों की ऊपर की सतह में कोई विशेष पदार्थ है, जो बेरी-बेरी रोग का निरोध करता है। चावलों की पालिश करने पर यह ऊपर की सतह उतर जाती है तथा ऐसे चावल खाने से बेरी-बेरी रोग होता है। फन्क ने मुर्गियों पर परीक्षण करके इसी प्रकार का निष्कर्ष निकाला और देखा कि चावल के ऊपरी आवरण की अत्यल्प मात्राओं के देने पर बेरी-बेरी रोग का निरोध होता है। उसने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पदार्थ को विटामिन नाम दिया। मैककालम ने दुग्धशर्करा में जलविलेय बी की खोज की थी।

थायामिन की खोज का श्रेय जेन्सन और डोनथ नाग के वैज्ञानिकों को है, जिन्होंने 1926 ईसवी में चावलों के ऊपरी आवरण में से इस विटासिन को प्राप्त किया था। 1936 ईसवी में विलियम और उसके सहयोगियों ने थायामिन का संश्लेषण किया था। अब यह संश्लिष्ट विटामिन विशुद्ध रासायनिक रूप में बाजार में प्राप्त है।

शरीर में थायामिन के कार्य और उसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

थायामिन का सबसे प्रमुख कार्य कार्बोहाइड्रेटों के पाचन में सहायता करना है। कार्बोहाइड्रेटों का पाचन ग्लूकोज के रूप में होता है और ग्लूकोज अवशोषित होकर रक्त में पहुँचता है। ग्लूकोज शरीर में शक्ति को उत्पन्न करता है। शक्ति प्रदान करने के लिये ग्लूकोज में अनेक रासायनिक परिवर्तन होते हैं। इस प्रक्रिया में ग्लूकोज से पाइरूविक अम्ल बनता है। इस पाइरूविक अम्ल को शक्ति में परिणत करने के लिये थायामिन की आवश्यकता होती है। इस अवस्था में यदि शरीर को थायामिन प्राप्त नहीं होगा तो पाइरूविक अम्ल शक्ति में परिणत नहीं होगा और यह शरीर में संचित होने लगेगा। पाइरूविक अम्ल का शरीर में संचित होना विषाक्तता उत्पन्न करता है। थायामिन की कमी को मापने के लिये रुधिर में पाइरूविक अम्ल की मात्रा को मापना चाहिये।

थायामिन का प्रभाव तन्त्रिका संस्थान पर भी है। तन्त्रिकाओं के ठीक प्रकार से कार्य कर सकने के लिये थायामिन की आवश्यकता होती है। हृदय को स्वस्थ रखने में तथा कार्य करने में थायामिन सहायक होता है। शरीर की उचित वृद्धि के लिये भी यह विटामिन आवश्यक है।

शरीर को थायामिन की पूरी मात्रा प्राप्त न होने पर अस्वस्थ प्रभाव उत्पन्न होते हैं। इन प्रभावों का बहुत सूक्ष्मता से अध्ययन किया गया है। ये प्रभाव तीन प्रकार के हैं— पाचन सम्बन्धी, हृदय एवं रक्त परिवहन सम्बन्धी तथा तन्त्रिका सम्बन्धी।

थायामिन की उपलब्धि कम होने पर सबसे पहले पाचन संस्थान पर प्रभाव पड़ता है। भूख कम हो जाती है, कब्ज रहता है और इसके साथ अरुचि, मतली तथा वमन हो सकते हैं। पेशियों की शक्ति कम हो जाती है, भूलना प्रारम्भ हो जाता है, मन में भ्रान्ति और भय उत्पन्न होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थायामिन की बहुत कमी होने पर बेरी-बेरी के लक्षण उत्पन्न होते हैं। बहु-तन्त्रिकाशोथ और परिसरीय तन्त्रिकाशोथ होते हैं। अंगों में भारीपन का अनुभव होता है तथा निर्बलता आ जाती है। पेशियाँ कमजोर हो जाती हैं तथा सूखने लगती हैं। कलाई और पैरों में शक्ति नहीं रह जाती और वे लटक से जाते हैं। सन्धियों में, विशेष कर घुटनों और टखनों में प्रतिक्रिया नहीं होती। थोड़ा-सा भी परिश्रम करने पर साँस फूलने लगता है और छोटा-छोटा साँस आता है। हृदय में धड़कन बढ़ जाती है, इसकी पेशी में दर्द होता है और यह फैल जाता है। सारे शरीर पर शोफ होती है।

थायामिन की प्राप्ति के स्रोत—

थायामिन प्रायः सभी वनस्पतिज और जान्तव भोजनों में उपलब्ध है। यह हो सकता है कि किन्हीं भोजनों में यह विटामिन अधिक हो और किन्हीं में कम। इसलिये थायामिन की आवश्यकता की पूर्ति के लिये विविध आहारों को मिश्रित रूप में खाना चाहिये।

यीस्ट में, चावलों की ऊपरी सतह में और गेहूँ के अंकुरों में थायामिन प्रचुर मात्रा में होता है। इन वस्तुओं से थायामिन को क्रिस्टलीय रूप में पृथक् किया जा सका है। अनाजों, दालों, गिरियों, तेल के बीजों और हरी पत्तियों वाली सब्जियों में यह प्रचुर मात्रा में होता है। अण्डे, मछलियाँ और मांस भी इसके अच्छे स्रोत हैं। गुजबेरी और सूखे आलूबुखारे में यह विटामिन बहुत अधिक होता है। अधिकांश फलों में और दूध में इसको मात्रा कम होती है। धान को वाष्पित कर उससे पृथक् किये गये चावलों से, हरे मटर, सेम और सोयाबिन से यह विटामिन बहुत अधिक मात्रा में मिल सकता है।

जिन स्थानों पर चावल को मुख्य भोजन के रूप लिया जाता है, वहाँ पालिश-दार चावलों को खाने से थायामिन की बहुत अधिक कमी हो सकती है। धान को वाष्पित करके पृथक् किये गये चावलों को खाने से इस विटामिन की बहुत कुछ पूर्ति हो सकती है। गेहूँ में यह विटामिन अधिकांश रूप में इसके अंकुर में रहता है, अतः जबकि सम्पूर्ण आटे में यह विटामिन प्रचुर होता है, श्वेत आटे में यह बहुत कम होता है।

थायामिन ताप को बहुत कुछ सहन तो कर सकता है, परन्तु ऊँचे तापमानों को लम्बे समय तक सहन नहीं कर सकता। 120° सेन्टीग्रेड तापमान पर भोजनों को को उबालने से तीन घण्टे में यह सम्पूर्ण नष्ट हो जाता है। क्षारीय माध्यम में भोजनों को उबालने से यह विटामिन बहुत शीघ्र नष्ट होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परीक्षणों से यह सिद्ध किया गया है कि आन्तों में विद्यमान कुछ जीवाणु थायामिन का संश्लेषण करते हैं, परन्तु यह संश्लिष्ट विटामिन जीवाणुओं की कोशिकाओं में रहता है तथा आन्तों द्वारा अवशोषित नहीं होता। इसलिये इस संश्लिष्ट विटामिन का मनुष्य के लिये कोई मूल्य नहीं है।

यीस्ट में थायामिन प्रचुर मात्रा में होता है। परीक्षणों द्वारा यह सिद्ध हुआ है कि जीवित यीस्ट का आन्तों में अवशोषण नहीं होता, परन्तु सुखाये गये यीस्ट का थायामिन जन्तुओं के लिये प्राप्य है।

इस समय बाजार में व्यापारिक रूप से संश्लिष्ट थायामिन प्रचुर मात्रा में प्राप्य है। निम्न तालिका में कुछ भोजनों के थायामिन के अंश दिये गये हैं—

भोजन	थायामिन मिलीग्राम की मात्राओं में प्रति ग्राम भोजन में
अनाज—	
गेहूँ साबुत	0·45
गेहूँ का आटा सम्पूर्ण	0·50
गेहूँ का आटा परिशोधित	0·10
गेहूँ का अंकुर	3·00
चावल घर पर कूटकर धान से निकाले गये	0·30
चावल पालिश किये गये	0·05
जौ	0·47
मक्का	0·42
जई	0·98
दालें—	
चना साबुत	0·30
चना दाल	0·48
मूँग	0·72
मसूर	0·45
मटर	0·47
सोयाबिन	0·73
अरहर	0·45
फल और शाक—	
गाजर	0·04
प्याज़	0·08

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आलू	0·10
मूली कन्द	0·06
मूली के पत्ते	0·03
शकरकन्दी	0·08
चुकन्दर	0·04
हरी सेम	0·09
सेव	0·12
केला	0·05
अंगूर	0·12
पपीता	0·04
अनन्नास	0·20
टमाटर	0·12
आम	0·04
गिरियाँ और मेवे—	
बादाम	0·24
नारियल की गिरि सूखी	0·08
मूँगफली ताजी	0·90
मूँगफली भुनी हुई	0·39
दूध—	
गाय का दूध	0·05
भैंस का दूध	0·04
बकरी का दूध	0·05
मानव दूध	0·02
दूध का चूर्ण मक्खन निकला हुआ	0·45
दूध का चूर्ण सम्पूर्ण	0·31
मांस और अण्डे—	
भेड़ का मांस यकृत	0·36
सूअर का मांस	0·54
गौ का मांस	0·15
अण्डा मुर्गी का	0·10
यीस्ट ताजा	3·00
यीस्ट सूखा ब्रेवर का	6·00–10·00

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

थायामिन की आवश्यकता—

थायामिन की आवश्यकता कार्बोहाइड्रेटों के पाचन के लिए होती है। प्रोटीनों और वसाओं के पाचन से इस विटामिन का प्रत्यक्ष सम्बन्ध नहीं है। थायामिन का उपयोग ग्लूकोज से ऊष्मा के निष्पन्न होने में होता है। इसलिए थायामिन की आवश्यकता को ऊष्मा की कैलोरियों की आवश्यकता से निर्धारित किया जा सकता है। यह सिफारिश की गई है कि 1000 कैलोरियों के लिये 0·5 मिलीग्राम थायामिन की आवश्यकता होती है। इसलिये यदि भोजन 2000 कैलोरी का है तो उसके लिये 1·0 मिलीग्राम थायामिन की प्रतिदिन आवश्यकता होगी। भारतवर्ष में औसतन प्रत्येक व्यक्ति को इतनी ही कैलोरियों का भोजन प्राप्त हो पाता है। इसलिये उनको एक मिलीग्राम थायामिन की मात्रा प्रतिदिन सिफारिश की गई है। गर्भावस्था और दूध पिलाने की अवधि के लिये 1·5 मिलीग्राम थायामिन प्रतिदिन मिलनी चाहिए। रोग की अवस्था में बड़ी मात्राओं में थायामिन दिया जाता है। परन्तु इसे प्रायः अन्य विटामिनों के साथ विटामिन B संमिश्र के रूप में देते हैं।

भारतवर्ष में भारतीयों का मुख्य भोजन अनाज है, तथा इससे उनकी आवश्यकता के अनुसार थायामिन प्राप्त हो जाना चाहिए। भोजन को पकाने में प्रायः 15 से 25 प्रतिशत थायामिन नष्ट हो सकता है और मिश्रित आहार की व्यवस्था को देखते हुये इतने विटामिन की क्षति हानिकर नहीं है। परन्तु भोजनों को तैयार करने की भारतीय विधियों में निम्न कारणों से बहुत सा विटामिन नष्ट होता है—

1. बहुत बार भोजनों को बहुत लम्बे समय तक उबाला जाता है।
2. कुछ भोजनों को जल्दी बनाने के लिये खाने का सोडा डाल देते हैं। क्षारीय माध्यम में पकने से थायामिन नष्ट हो जाता है।
3. भोजनों को पानी के माध्यम में पका कर उस पानी को फैंक देने की प्रायः प्रवृत्ति है। थायामिन जलविलेय विटामिन है। पानी में पकने से यह विटामिन जल में घुल जाता है तथा उस समय पानी को फैंक देने के साथ फिंक जाता है। अनेक सब्जियों को पहले पानी में उबाल कर उसका पानी फैंक दिया जाता है तथा उसके बाद उनको तैयार किया जाता है। चावलों को उबाल कर उसका पानी, जो कि मांड के रूप में होता है, फैंक दिया जाता है। इससे उसका विटामिन अंश चला जाता है। चावलों को बहुत अधिक धोने से भी उसका विटामिन अंश नष्ट होता है।
4. अनाजों को बहुत अधिक परिशोधित करने, चावलों की पालिश करने और गेहूँ के आटे को परिशोधित करने से भी उसके विटामिन अंश नष्ट हो जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इन तथ्यों को ध्यान में रखकर भोजनों को तैयार करने एवं उनको पकाने की विधियों में इस प्रकार सुधार होना चाहिये कि उनका विटामिन अंश नष्ट न होने पावे। ऊपर कहे गये कारणों से थायामिन के अतिरिक्त भोजन के बहुत से खनिज तथा अन्य विटामिन भी नष्ट होते हैं। अतः भोजनों को तैयार करने की विधियों में सुधार किया जाना आवश्यक है।

2. विटामिन B_2 (रिबोफ्लेविन)—

पहले मेककालम ने प्रतिपादित किया था कि दूध में जलविलेय बी नामक तत्त्व होता है, जो शरीर के स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये अनिवार्य है। इसके बाद वैज्ञानिकों ने यह खोज की कि यह जलविलेय बी एक ही पदार्थ नहीं है, परन्तु अनेक पदार्थों का मिश्रण है। इससे B संमिश्र विटामिनों की खोज प्रारम्भ हुई। इस जलविलेय बी में वैज्ञानिकों ने पहले विटामिन B_1 (थायामिन) की खोज करके इसके बाद विटामिन B_2 (रिबोफ्लेविन) की खोज की। एम्मेट और मैक्किम नामक वैज्ञानिकों ने चावल के ऊपर के दो विटामिनों की खोज की, जिनमें दूसरा विटामिन रिबोफ्लेविन था। रिबोफ्लेविन की खोज सबसे पहले 1933 ईसवी में हुई। वैज्ञानिकों ने भोजनों में से एक पीला पदार्थ प्राप्त किया, जो कि जलविलेय था। इस पदार्थ को विटामिन B_1 या रिबोफ्लेविन कहा गया। क्योंकि इस पदार्थ को बी वर्ग की विटामिनों में दूसरे नम्बर पर खोजा गया, इसलिये इस विटामिन का नाम विटामिन B_1 हुआ। अपनी रासायनिक रचना के कारण इसको रिबोफ्लेविन नाम दिया गया। सबसे पहले इस विटामिन की खोज दूध में की जाने के कारण इसको लैक्टोफ्लेविन नाम भी दिया गया था।

1935 ईसवी में जर्मन वैज्ञानिक ने रिबोफ्लेविन का संश्लेषण कर लिया था।

रिबोफ्लेविन जल में थायामिन की अपेक्षा कम विलेय है। चिकित्सा में इसके अधिक विलेय प्रकल्पनों— ऐसीटेट और फॉस्फेट का प्रयोग किया जाता है। यह थायामिन की अपेक्षा ताप को अधिक सहन करती है, परन्तु रिबोफ्लेविन के घोल को सूर्य के प्रकाश में रख दिये जाने पर यह नष्ट होने लगता है। दूध के किसी प्रकल्पन को धूप में रखने से इसका रिबोफ्लेविन अंश नष्ट होने लगेगा। यदि दूध को 3·5 घण्टों तक धूप में रख दिया जावे तो इसका तीन चौथाई रिबोफ्लेविन नष्ट हो जावेगा। रिबोफ्लेविन के जलीय घोल में हरी-पीली प्रतिदीप्ति होती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रिबोफ्लेविन के कार्य और इसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

रिबोफ्लेविन शरीर में एक एन्जाइम के समान कार्य करता है और उपचय तथा अपचय की प्रक्रियाओं के लिये आवश्यक होता है। कार्बोहाइड्रेटों के पाचन और उनके द्वारा कैलोरी उत्पन्न करने के लिये इसका उपयोग होता है। रिबोफ्लेविन से युक्त एन्जाइमों को फ्लेवोप्रोटीन कहा जाता है। सबसे पहले बार वर्ग के पीले एन्जाइम को पृथक् किया गया था। यह विटामिन कोशिकाओं के श्वसन में अर्थात् कोशिकाओं में ऑक्सीजन को पहुँचाने में भाग लेता है और सभी प्रकार की वनस्पतियों तथा प्राणियों के जीवन की वृद्धि के लिये आवश्यक है।

रिबोफ्लेविन की कमी से उत्पन्न होने वाले लक्षण मुख्य रूप से तीन स्थानों पर प्रकट होते हैं— आँखों पर, त्वचा पर और तन्त्रिकाओं पर।

रिबोफ्लेविन की कमी का सबसे पहले आँखों पर प्रभाव होता है। आँखों की पलकें सूज जाती हैं और कठोर हो जाती हैं। आखें दुखने आ जाती हैं। आँखों की रक्तवाहिनियों के फैल जाने के कारण कॉर्निया में लाल डोरे पड़ जाते हैं। इससे पलकों में, स्वच्छ-मण्डल में और कॉर्नियाँ में शोथ होती है तथा ये लाल हो जाते है। आँखें प्रकाश के प्रति संवेदी हो जाती हैं तथा प्रकाशभीति (प्रकाश से डर उत्पन्न होना) होती है।

त्वचा के परिवर्तन मुख, होठ, जीभ, नाक और अण्डकोश पर प्रकट होते हैं। मुख और गले में सूजन होती है तथा छाले हो जाते हैं। नाक, कानों के पीछे और अण्डकोश की त्वचा में शोफ होती है। इनमें छाले होते हैं, जिनमें से पानी बहता है। जीभ सूज जाती है और इस पर छाले पड़ जाते हैं। मुख के कोनों और जीभ पर दरारें हो सकती हैं।

रिबोफ्लेविन के स्रोत—

सभी वनस्पतिज और जान्तव भोजनों में रिबोफ्लेविन व्यापक रूप से पाया जाता है। गेहूँ के अंकुरों और यीस्ट में यह बहुत अधिक मात्रा में होता है। यीस्ट में रिबोफ्लेविन प्रचुर मात्रा में है, परन्तु जीवित यीस्ट का विटामिनों का आन्तों में अवशोषण नहीं होता। सूखी यीस्ट की विटामिन मनुष्य को प्राप्य है। जन्तुओं के यकृत और प्लीहा भी इस विटामिन के बहुत अधिक समृद्ध स्रोत हैं। दूध में रिबोफ्लेविन पर्याप्त मात्रा में रहता है। दूध के अन्य पदार्थों— दही, लस्सी, पनीर, गाढ़ा किया गया दूध, दूध का चूर्ण, इन सभी पदार्थों में यह विटामिन नहीं होता है। अण्डों में भी रिबोफ्लेविन पर्याप्त मात्रा में मिलता है।

वनस्पतिज भोजन— मटर, फलियाँ, दालें, गिरियाँ, हरी पत्तियों वाली सब्जियाँ रिबोफ्लेविन की उत्तम स्रोत हैं। सम्पूर्ण (परिशोधित न किये गये) अनाजों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में यह काफी मात्रा में उपलब्ध है । परिशोधित अनाजों में, जड़ों वाले खाद्यों में और फलों में यह कम होता है । निम्न तालिका में कुछ भोजनों के रिबोफ्लेविन अंश दिये गये हैं—

भोजन	रिबोफ्लेविन मिलीग्राम की मात्रा में प्रति ग्राम भोजन में
अनाज—	
गेहूँ	0·12
गेहूँ का आटा सम्पूर्ण	0·29
गेहूँ का आटा परिशोधित	0·07
गेहूँ का अंकुर	0·70
चावल घर पर निकाले गये	0·10
चावल पालिश किये गये	0·09
जौ	0·20
मक्का	0·10
जई	0·12
दालें—	
चना साबुत	0·51
चना दाल	0·18
मूँग साबुत	0·39
मूँग दाल	0·15
मसूर	0·49
मटर	0·38
सोयाबिन	0·76
अरहर	0·51
फल और शाक—	
गाजर	0·02
आलू	0·01
प्याज़	0·02
मूली	0·02
मूली के पत्ते	0·16
शकरकन्दी	0·04
चुकन्दर	0·07
हरी सेम	0·12

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सेव	0·03
केला	0·17
अंगूर	0·02
पपीता	0·25
अनन्नास	0·12
टमाटर	0·06
आम	0·05
गिरियाँ और मेवे—	
बादाम	0·15
नारियल की गिरी सूखी हुई	0·06
मूंगफली ताजी	0·30
मूंगफली भुनी हुई	0·13
दूध—	
गाय का दूध	0·15
भैंस का दूध	0·10
बकरी का दूध	0·12
मानव दुग्ध	0·02
दूध का चूर्ण मक्खन निकला हुआ	1·64
दूध का चूर्ण सम्पूर्ण	1·36
माँस और अण्डे—	
भेड़ का यकृत	1·70
गाय का यकृत	2·00
सूअर का माँस (पेशी)	0·04
गाय का माँस (पेशी)	0·09
अण्डा	0·18
यीस्ट ताजा	1·50
यीस्ट सूखा हुआ	4·00

रिबोफ्लेविन की आवश्यकता—

शरीर के लिये रिबोफ्लेविन की कितनी आवश्यकता है, इसका निश्चित निर्धारण नहीं किया जा सका है। पहले पोषण के सम्बन्ध में जो रिपोर्टें प्रकाशित

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुईं, उनमें रिबोफ्लेविन की दैनिक मात्रा को निर्धारित नहीं किया गया। 1958 ईसवी में संयुक्तराज्य अमेरिका में शिशुओं के लिये 0·5 से 0·8 मिलीग्राम, बालकों के लिये 1·0 से 1·8 मिलीग्राम, किशोरों के लिये 2·1 से 2 5 मिलीग्राम, वयस्क पुरुषों के लिये 1·8 मिलीग्राम और स्त्रियों के लिये 1·5 मिलीग्राम मात्रा की प्रतिदिन की सिफारिश की गई थी। गर्भावस्था के लिये यह मात्रा 2·0 मिलीग्राम और दूध पिलाने की अवधि के लिये 2·5 मिलीग्राम थी।

भारतवर्ष में पोषण के लिये नियुक्त समिति ने 1968 ईसवी में रिबोफ्लेविन की प्रतिदिन की निम्न मात्रायें निर्धारित की हैं—

बच्चों के लिये 0·7 से 1·2 मिलीग्राम, किशोरों के लिये 1·2 से 1·7 मिलीग्राम, वयस्कों (पुरुषों) के लिये 1·3 से 2·2 मिलीग्राम और स्त्रियों के लिये 1·0 से 1·7 मिलीग्राम। गर्भावस्था में 0 2 मिलीग्राम और दूध पिलाने की अवधि में 0·4 मिलीग्राम अतिरिक्त विटामिन मिलनी चाहिये।

अतिसार होने पर विटामिन का अवशोषण कम होता है, इसलिये इस अवस्था में अधिक विटामिन मिलनी चाहिये। रोग से अच्छा होने पर स्वास्थ्य के लाभ के लिये इस विटामिन को प्रचुर मात्रा में दिया जाना चाहिये।

अधिकांश भारतीय भोजनों में रिबोफ्लेविल की मात्रा कम है। जिन भोजनों में यह विटामिन प्रचुर है, वे भोजन आम भारतीय को कम ही उपलब्ध हैं। अण्डे, मांस आदि पदार्थ धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक कारणों से अधिकांश भारतीयों को उपलब्ध नहीं है। दूध और हरी सब्जियाँ भी मंहगी होने के कारण प्रत्येक को उपलब्ध नहीं हो पाते। इस विटामिन को प्रचुर मात्रा में प्राप्त करने के लिये उन्नत भोजनों को प्रचुर मात्रा में प्राप्त कराना आवश्यक है।

3. नियासिन (निकोटिनिक अम्ल)—

नियासिन या निकोटिनिक अम्ल को पैलाग्रारोधी कारक के रूप में जाना जाता है। इसको पी-पी कारक (पैलाग्राप्रिवेन्टिव कारक) भी कहा गया है। वैज्ञानिकों ने यह देखा है कि इस विटामिन के अभाव में पैलाग्रा का (इटेलियन शब्द पैले आग्रा = pelle Agra = खुरदरी त्वचा) प्रसार तेजी से होता है।

पहले इस विटामिन को निकोटिनिक अम्ल और निकोटिनिक अम्ल एमाइड नाम दिया गया था। परन्तु इन शब्दों में निकोटिन से भ्रम उत्पन्न होने के कारण अब इन नामों के स्थानों पर नियासिन और नियासिन एमाइड का प्रयोग अधिक होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यद्यपि पैलाग्रा रोग के त्वचा सम्बन्धी विकारों के सम्बन्ध में अब से लगभग 250 वष पूर्व 1725 में स्पेन में अध्ययन किया गया था, तथापि इस रोग के कारण को खोजा नहीं जा सका था। 1914 ईसवी में फन्क ने चावल के ऊपरी आवरण से निकोटिनिक अम्ल को पृथक् किया था, परन्तु वह यह प्रतिपादित नहीं कर पाया था कि यह कोई विटामिन है। तथापि उसने यह अवश्य देखा कि इसको बहुतन्त्रिकाशोथ को रोकने वाले पदार्थों के साथ देने पर लाभदायक प्रभाव होता है।

इस शताब्दी के प्रारम्भ में अमेरिका के दक्षिणी राज्यों में जहाँ कि निर्धन वर्ग के भोजन में मक्का प्रमुख खाद्य था, पेलाग्रा रोग का प्रबल प्रसार था। इस रोग से अनेक व्यक्तियों की मृत्यु हो जाती थी। इसकी रोकथाम और कारणों की खोज के लिये डा० गोल्डवर्कर को नियुक्त किया गया। उसने अन्वेषण किया कि यह रोग संक्रामक नहीं है, अपितु भोजन में प्रोटीनों की कमी के कारण होता है। पेलाग्रा रोग से पीड़ित व्यक्तियों के आहार में परिवर्तन करने से स्पष्ट लाभ हुआ और उनमें इस रोग का पुनः आक्रमण नहीं हुआ।

बाद में यह भी खोज की गई कि मक्का में नियासिन अथवा नियासिन का पूरोवर्ती ट्रिप्टोफेन नामक एमिनो अम्ल अत्यल्प होता है। इसके अतिरिक्त उसमें एक नियासिनरोधी कारक भी होता है। अतः मुख्य रूप से मक्का का आहार करने वालों को इस रोग के होने भी अधिक सम्भावना रहती है।

डा० गोल्डवर्कर ने यह भी पाया कि ब्रेवर के यीस्ट में एक तत्त्व है, जो पेलाग्रा रोग का निरोध करता है। इस पदार्थ को अलग कर लिया गया और इसको पेलाग्रारोधी कारक नाम दिया गया। 1937 में एलवेहजेम और उसके सहकारियों ने नियासिन से सम्बन्धित अपने अन्वेषणों को प्रकाशित किया और सिद्ध किया कि डा० गोल्डवर्कर का पेलाग्रारोधी कारक और नियासिन एक ही पदार्थ हैं।

रसायनज्ञों को निकोटिनिक अम्ल का ज्ञान 1867 ईसवी से था और उनके पास प्रयोगशालाओं में यह पदार्थ प्रचुर परिमाण में था। किन्तु वे इसके पेलाग्रारोधी प्रभाव को नहीं जानते थे। यह एक बहुत बड़ी व्यंग्यात्मक स्थिति थी कि जब एक पेलाग्रारोधी कारक प्रचुर मात्रा में प्रयोगशालाओं में हो और हजारों व्यक्ति इसकी न्यूनता से पीड़ित होते रहें।

शरीर में नियासिन के कार्य और उसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

थायामिन और रिबोफ्लेविन के समान नियासिन भी शरीर में पाचन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्रियाओं में सहायक होता है। यह कार्बोहाइड्रेटों के पाचन में भाग लेता है और शरीर की कोशिकाओं को ऑक्सीजन की उपलब्धि कराता है।

एन्जाइमों के कार्यों में नियासिन का महत्वपूर्ण भाग है। कुछ एन्जाइमों का यह आण्विक घटक है। नियासिन से युक्त दो सहएन्जाइम शरीर में कार्य करते हैं। सहएन्जाइम-१, जिसको डाइफॉस्फोपिरिडिन न्यूक्लियोटाइड (DPN) भी कहते हैं, इस विटामिन से युक्त है। यह सहएन्जाइम लैक्टिक अम्ल, मैलिक अम्ल जैसे पदार्थों का पाचन करता है। दूसरा सहएन्जाइम–२ है, जिसको ट्राइफॉस्फोपिरिडिन न्यूक्लियोटाइड (TPN) भी कहते हैं। यह ग्लूकोज, हेक्टोज और ग्लूटैमिक अम्ल का पाचन करता है।

भोजनों में विद्यमान एक एमिनो अम्ल ट्रिप्टोफैन में नियासिन विद्यमान होता है। इसलिये ट्रिप्टोफैन से युक्त भोजनों को खाने से नियासिन की कमी बहुत कुछ पूरी हो जाती है।

नियासिन की कमी से उत्पन्न होने वाले लक्षणों को पेलाग्रा नाम से जाना जाता है। इससे उत्पन्न लक्षणों को तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं— त्वचा को प्रभावित करने वाले लक्षण, पाचन सम्बन्धी लक्षण तथा तन्त्रिकाओं को प्रभावित करने वाले लक्षण।

नियासिन की कमी का सबसे पहले त्वचा पर प्रभाव होता है। त्वचा, विशेष रूप से जहाँ प्रत्यक्ष रूप से सूर्य का प्रकाश पड़ता है, लाल हो जाती है, इसमें खुजली होती है तथा छाले पड़ जाते हैं। त्वचा में सूजन हो सकती है।

पाचन से सम्बन्धित लक्षण इस प्रकार हो सकते हैं— प्रारम्भ में भूख लगनी बन्द हो जाती है और इसके बाद अतिसार होता है। मुख में छाले हो जाते हैं, जीभ पर व्रण होते हैं और आन्तों में शोथ होती है। बाद की अवस्थाओं में यकृत पर भी प्रभाव पड़ता है।

तन्त्रिकाओं को प्रभावित करने वाले लक्षण भी उत्पन्न होते हैं— सिर में दर्द होता है, चक्कर आते हैं, नींद नहीं आती, मानसिक अवसाद होता है, स्मरण शक्ति कम हो जाती है और मनोभ्रंश की अवस्था हो सकती है।

पेलाग्रा रोग का सम्बन्ध मक्का के साथ जोड़ा गया है। यह रोग उन प्रदेशों में अधिक होता है, जहाँ मक्का भोजन का प्रमुख अंग है। परन्तु भारतवर्ष में इसकी घटनायें बहुत कम देखी गई हैं। वैज्ञानिकों ने यह सिद्ध किया है कि मक्का में नियासिन अत्यल्प है। इसके अतिरिक्त इसमें ट्रिप्टोफैन भी नहीं होता, जो कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नियासिन का पूरोवर्ती है और जिससे आन्तों में नियासिन की रचना हो सकती है। मक्का में कुछ अन्य पदार्थ नियासिनरोधी भी हैं, जो नियासिन का विरोध करते हैं। रासायनिक दृष्टि से ये पदार्थ पिरिडिन–३ सल्फोनिक अम्ल और ३–एसिटिल पिरिडिन हैं।

नियासिन के स्रोत—

प्राकृतिक पदार्थों में नियासिन व्यापक रूप से उपलब्ध है। वनस्पतिज और जान्तव भोजनों में यह विटामिन प्रचुर मात्रा में मिलता है। ब्रेवर का यीस्ट इसका बहुत समृद्ध स्रोत है। जान्तव भोजनों में यह मांसपेशियों में, यकृत में और वृक्कों में प्रचुर परिणाम में होता है। दूध और अण्डों में इस विटामिन की मात्रा बहुत कम होती है।

वनस्पतिज भोजनों में नियासिन मटर, दालों, फलियों और गिरियों में प्रचुर होता है। अनाजों में, विशेष रूप से परिशोधित अनाजों में, फलों में और सब्जियों में इसकी मात्रा कम है।

नियासिन का ट्रिप्टोफैन से बहुत घनिष्ठ सम्बन्ध है। ट्रिप्टोफैन एक एमिनो अम्ल (प्रोटीन का पदार्थ) है, जिसमें नियासिन होती है। आन्त्र के जीवाणु ट्रिप्टोफैन से नियासिन की रचना करके इसकी आवश्यकता को पूरा करते हैं। 60 मिलीग्राम ट्रिप्टोफैन से एक मिलीग्राम नियासिन बनता है। इसलिये नियासिन के स्रोत पर विचार करते हुये ट्रिप्टोफैन के स्रोतों पर भी विचार कर लेना चाहिये। जिन खाद्य पदार्थों में ट्रिप्टोफैन है, उनसे मनुष्य को नियासिन अवश्य प्राप्त होता है।

ट्रिप्टोफैन अनेक भारतीय भोजनों में विद्यमान है। दालों और गिरियों में यह प्रचुर होता है। कुछ अनाजों और सब्जियों में यह रहता है। मांस, मछली, दूध और अण्डों में भी इसकी कुछ मात्रायें हैं। जिन भोजनों में उच्च कोटि के प्रोटीन होते हैं, उनमें ट्रिप्टोफैन अच्छी मात्रा में प्राप्त हो सकता है। निम्न तालिका में कुछ भोजनों के नियासिन अंश दिये जा रहे हैं—

भोजन	नियासिन मिलीग्राम की मात्रा में प्रति 100 ग्राम भोजन में
अनाज—	
गेहूँ	5·0
गेहूँ का आटा सम्पूर्ण	4·3
गेहूँ का आटा परिशोधित	0·9
गेहूँ का अंकुर	7·0
चावल घर पर निकाले गये	4·0

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चावल पालिश किये गये	3·8
जौ	5·4
मक्का	1·4
जई	1·1
बाजरा	3·2
दालें—	
चना साबुत	2·1
चना दाल	2 4
मूंग साबुत	2·1
मूंग दाल	2·4
मसूर	1·5
मटर	1·9
सोयाबीन	2·4
अरहर	2·6
फल और सब्जियाँ—	
गाजर	0·6
आलू	1·2
प्याज	0·5
मूली	0·5
मूली के पत्ते	0·3
शकरकन्दी	0·7
चुकन्दर	0·4
सेब	0·2
केला	0·3
अंगूर	0·3
पपीता	0·2
अनन्नास	0·1
टमाटर	0·4
आम	1·5
गिरियाँ और मेवे—	
बादाम	2·5

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारियल की गिरी सूखी	0·6
मूंगफली ताजी	14·1
मूंगफली भुनी हुई	8·6
दूध—	
गाय का दूध	0·1
भैंस का दूध	0·1
बकरी दूध	0·3
मानव दूध	0·00
दूध का चूर्ण मक्खन निकला हुआ	1·0
दूध का चूर्ण सम्पूर्ण	1·8
माँस और अण्डे—	
भेड़ का यकृत	17·6
सूअर का मांस (पेशी)	2·8
गाय का मांस (पेशी)	6·4
अण्डा मुर्गी का	0·1
यीस्ट सुखाया हुआ	40.00

नियासिन की आवश्यकता—

यद्यपि शरीर के लिये नियासिन की आवश्यकता का निश्चित निर्धारण नहीं किया जा सका है, तथापि इसकी निश्चित मात्रा की सिफारिश अवश्य की गई है। भारतीय चिकित्सा अनुसन्धान संस्था ने अपनी रिपोर्ट में इसकी निश्चित मात्रा निर्धारित नहीं की, तथापि उसने सिफारिश की कि आयु और शारीरिक कार्य के हिसाब से 4 से 19 मिलीग्राम नियासिन की प्रतिदिन आवश्यकता हो सकती है। जो व्यक्ति प्रोटीन से युक्त भोजन अधिक लेते हैं, उनको नियासिन का पूरोवर्ती ट्रिप्टोफैन मिल जाने से इसकी आवश्यकता कम हो सकती है। गर्भावस्था और स्तन्यपान की अवधि में इसकी आवश्यकता अधिक होती है।

नियासिन कार्बोहाइड्रेटों के पाचन में भाग लेता है, इसलिये इसका भोजन में कुल कैलोरियों से प्रत्यक्ष सम्बन्ध है। संयुक्त राज्य अमेरिका की राष्ट्रीय शोध काउन्सिल ने संकेत किया है कि 1000 कैलोरियों के लिये 6.6 मिलीग्राम नियासिन चाहिये। इस हिसाब से औसत भारतीय के लिये, जो 2000 कैलोरियों का भोजन करता है, प्रतिदिन 13.2 मिलीग्राम नियासिन चाहिये। परन्तु भारतीयों के भोजनों में कार्बोहाइड्रेटों का अधिक अंश होता है, इसलिये उनको इस विटामिन की अधिक आवश्यकता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारतवर्ष में पोषण के लिये नियुक्त समिति ने 1968 ईसवी में नियासिन की निम्न मात्रा की सिफारिश की थी—

बालकों के लिये 8 से 14 मिलीग्राम, किशोरों के लिये 14 से 21 मिलीग्राम, वयस्क पुरुषों के लिये 16 से 26 मिलीग्राम और स्त्रियों के लिये 13 से 20 मिलीग्राम। गर्भावस्था और दूध पिलाने की अवधि में क्रमशः 2 और 5 मिलीग्राम नियासिन अतिरिक्त मिलनी चाहिये।

पहले कहा जा चुका है कि भोजन की प्रोटीन में ट्रिप्टोफैन नाम का एमिनो अम्ल होता है, जिससे शरीर अपनी नियासिन की आवश्यकता को पूरा कर सकता है। इसलिये नियासिन की आवश्यकता का निर्धारण करने के लिये इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिये कि व्यक्ति कितना प्रोटीन युक्त भोजन कर रहा है और उसमें कितना ट्रिप्टोफैन है। भोजन में विद्यमान ट्रिप्टोफैन के अनुसार भोजन करने वाले की नियासिन की आवश्यकता कम हो जायेगी।

निम्न तालिका में कुछ भोजनों के प्रोटीन, ट्रिप्टोफैन, नियासिन और नियासिन तुल्यांक दिये गये हैं—

भोजनों के नियासिन तुल्यांक 100 ग्राम भोजन में

भोजन	प्रोटीन ग्राम	ट्रिप्टोफैन मिलीग्राम	नियासिन मिलीग्राम	नियासिन तुल्यांक मिलीग्राम
दूध	3.2	41	0.1	0.8
मछली (पोम्फ्रेट)	17.0	122	2.6	4.6
दालें—				
चना साबुत	17.1	131	2.1	4.3
चना दाल	24.0	292	2.0	6.8
मूंग साबुत	24.0	158	2.1	4.7
मसूर	25.1	216	1.5	5.1
मटर सूखी	19.7	292	1.9	6.1
अरहर दाल	22.3	144	2.6	5.0
बीज—				
राजाखीरा	16.5	119	3.6	5.6
अनाज—				
बाजरा	11.6	117	3.2	6.2

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

ज्वार	10.4	56	2.8	3.7
रागी	7.3	81	1.1	2.4
चावल हाथ का कुटा	7.5	80	3.9	5.2
गेहूँ सम्पूर्ण	11.8	120	5.0	7.0
सब्जियाँ—				
बथुआ	4.0	45	1.0	1.7
आलू	1.6	10	1.2	1.4

ऊपर लिखे तुल्यांक भारतीय चिकित्सा शोध संस्था की रिपोर्ट बुलेटिन नं० 42 छठे संस्करण 1966 से लिये गये हैं।

4. पैन्टोथीनिक अम्ल—

पैन्टोथीनिक अम्ल भी जलविलेय विटामिन B संमिश्र वर्ग का एक विटामिन है। इसकी खोज सबसे पहले 1933 ईसवी में विलियम्स और उसके सहयोगियों ने की थी। उन्होने देखा कि यह पदार्थ व्यापक रूप से प्रायः सभी भोजनों में पाया जाता है तथा यीस्ट और सूक्ष्मजीवियों की वृद्धि करता है। इस पदार्थ को पैन्टोथीनिक अम्ल नाम दिया गया। यह एक ग्रीक शब्द है, जिसका अर्थ है, सब स्थानों पर पाया जाने वाला। इस पदार्थ को उसने यकृत से भी प्राप्त किया।

कुछ समय बाद वूले आदि वैज्ञानिकों ने देखा कि यकृत में एक विशेष पदार्थ है, जो चूजों की त्वचा की शोथ को ठीक करता है। इसको उन्होंने चूजा-त्वचा-शोथ-रोधी कारक नाम दिया। यह देखा गया कि पैन्टोथीनिक अम्ल और चूजा-त्वचा-शोथ-रोधी कारक एक ही पदार्थ हैं।

1940 ईसवी में मर्क प्रयोगशाला के वैज्ञानिकों ने पैन्टोथीनिक अम्ल की रासायनिक रचना को जान कर इस विटामिन का संश्लेषण किया।

विशुद्ध पैन्टोथीनिक अम्ल गाढा पीले रंग का तेलीय पदार्थ है। इसका प्रयोग प्रायः कैल्सियम पैन्टोथीनेट के रूप में किया जाता है। यह यौगिक श्वेत गन्ध रहित क्रिस्टलीय रूप में होता है और जल में प्रचुर विलेय होता है।

पैन्टोथीनिक अम्ल के कार्य और उसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

सभी प्राणियों को वृद्धि के लिये पैन्टोथीनिक अम्ल की आवश्यकता होती है। सूक्ष्म जीवों और रोगों को उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं को भी अपनी वृद्धि के लिये इस बिटामिन की आवश्यकता होती है। यीस्ट को भी अपनी वृद्धि के लिये पैन्टोथीनिक अम्ल चाहिये। जन्तुओं में, विशेष रूप में चूजों में इसके अभाव में पैलाग्रा रोग के लक्षण उत्पन्न होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर में भोजनों के पाचन में पैन्टोथीनिक अम्ल का उपयोग होता है। यह विटामिन सहएन्जाइम-1 का एक घटक है और ऐसीटिक अम्ल उपचय (प्रोटीनों के पाचन) में भाग लेता है।

पैन्टोथीनिक अम्ल प्रकृति में इतने व्यापक रूप में पाया जाता है कि इसकी कमी से मनुष्यों में रोग के लक्षण प्रायः नहीं होते। इसके अतिरिक्त अनेक सूक्ष्मजीव पैन्टोथीनिक अम्ल का संश्लेषण करते हैं। आन्तों में बी. कोलाई नामक सूक्ष्मजीव होते हैं, जो इसका संश्लेषण करके शरीर में इसकी कमी की पूर्ति करते रहते हैं।

पैन्टोथीनिक अम्ल की कमी न होने पर भी मनुष्यों में इसकी कमी से उत्पन्न होने वाले विकारों का अध्ययन किया है। परीक्षण के रूप में पैन्टोथीनिक अम्ल से रहित आहार देकर देखा गया कि इसकी कमी होने पर शरीर में उत्तेजनशीलता और व्याकुलता उत्पन्न हो जाती है, हल्के से भी परिश्रम के बाद अत्यधिक थकावट होती है और कभी तन्द्रा तथा कभी अनिद्रा होती है। चाल लड़खड़ाने लगती है और पाचन के विकार उत्पन्न हो जाते हैं। पैन्टोथीनिक अम्ल को देने पर ये विकार ठीक हो जाते हैं।

भारतवर्ष में एक वैज्ञानिक बी० गोपालन ने पैन्टोथीनिक अम्ल की कमी से उत्पन्न होने वाले विकारों का अध्ययन किया। उन्होंने देखा कि इस विटामिन की कमी से तलवों और हथेलियों में तथा अन्य संवेदी अंगों में जलन का अनुभव होता है। जीभ में और अण्डकोश की त्वचा में शोथ हो सकता है। देखने की शक्ति कम हो जाती है। कैलशियम पैन्टोथीनेट को 20 से 40 मिलीग्राम की मात्रा में अन्तः-पेशी इन्जेक्शन द्वारा देने से ये विकार ठीक हो जाते हैं।

यह कहा जाता है कि पैन्टोथीनिक अम्ल बालों को सफेद होने से रोकता है। पश्चिमी देशों में केशों को काला करने के लिये इसका काफी विज्ञापन हुआ था। किन्तु परीक्षणों द्वारा इस धारणा का खण्डन किया गया और यह प्रतिपादित किया गया कि पैन्टोथीनिक अम्ल का बालों को काला करने के लिये कोई उपयोग नहीं है।

पैन्टोथीनिक अम्ल के स्रोत—

पैन्टोथीनिक अम्ल सभी उपलब्ध भोजनों में इतने व्यापक रूप से पाया जाता है कि इसके स्रोतों के सम्बन्ध में अधिक लिखने की आवश्यकता नहीं है। तथापि यीस्ट, अण्डे और यकृत इसके अत्यधिक समृद्ध स्रोत हैं। मांसों, क्रीम निकले हुये दूध, आलू, शकरकन्दी, सब्जी, फल, अनाजों आदि में भी यह विटामिन पर्याप्ता मात्रा में होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पैन्टोथीनिक अम्ल की आवश्यकता—

मनुष्यों में पैन्टोथीनिक अम्ल की आवश्यकता की विशेष परीक्षा नहीं की गई, क्योंकि यह सभी प्राकृतिक आहारों में पर्याप्त मात्रा में मिलता है। अनुमान किया गया है कि अति सामान्य आहार में भी 10 से 15 मिलीग्राम पन्टोथीनिक अम्ल भोजन करने वाले को प्राप्त हो जाता है। वैसे एक वयस्क मनुष्य के लिये प्रतिदिन 3 से 4 मिलीग्राम पैन्टोथीनिक अम्ल पर्याप्त होता है।

मुर्गी पालन व्यवसाय में पैन्टोथीनिक अम्ल का विशेष महत्त्व है। इसकी कमी से मुर्गियाँ रोगी हो जाती हैं और उनकी अण्डे देने की सामर्थ्य कम हो जाती है। अण्डे देने वाली मुर्गी को 100 ग्राम भोजन में 650 माइक्रोग्राम पैन्टोथीनिक अम्ल मिलना चाहिये। चूजों को स्वस्थ रखने के लिये उन्हें 100 ग्राम राशन में 150 माइक्रोग्राम पैन्टोथीनिक अम्ल पर्याप्त होता है।

5. विटामिन B_6 (पिरिडॉक्सिन)—

विटामिन B संमिश्र वर्ग में पिरिडॉक्सिन भी सम्मिलित है। गुणों और कार्यों के अनुसार इस विटामिन के अनेक नाम प्रचलित हुये। इस विटामिन के लिये चूहा एक्रोडीनिया कारक, चूहा त्वचाशोथरोधी कारक, विटामिन B_6 और विटामिन H नाम भी प्रसिद्ध हुये। यूरोप में इसको एडर्मिन भी कहा जाता रहा। वर्तमान समय में इसके दो नाम प्रचलित हैं—विटामिन B_6 और पिरिडॉक्सिन।

पिरिडॉक्सिन का अन्वेषण सबसे पहले चूहों पर परीक्षण करके किया गया था। इस विटामिन के अभाव में चूहों में एक्रोडीनिया (एक विशेष प्रकार की त्वचा की शोथ) उत्पन्न होती है। 1938 ई० में इस विटामिन को प्राकृतिक स्रोतों से पृथक् करके प्राप्त किया गया था। 1939 ई० में कुन्ह नामक वैज्ञानिक के नेतृत्व में जर्मन वैज्ञानिकों ने इसका संश्लेषण किया।

पिरिडॉक्सिन अकेला पदार्थ नहीं है, जिसमें विटामिन B_6 सक्रियता है। पिरिडॉक्सिन, पिरिडॉक्सेमिन और पिरिडॉक्सल नामक तीन पदार्थों में, जो कि परस्पर एक दूसरे में परिणत हो सकते हैं, विटामिन B_6 सक्रियता होती है। पिरिडॉक्सिन एक रंग रहित क्रिस्टलीय पदार्थ है, जो कि 160° सेन्टीग्रेड तापमान पर पिघल जाता है। यह जल में प्रचुरता से घुल जाता है। पिरिडॉक्सिन का हाइड्रोक्लोराइड लवण चिकित्सा में प्रयुक्त होता है।

पिरिडॉक्सिन के कार्य और इसकी कमी से उत्पन्न होने वाले लक्षण—

विटामिन B संमिश्र वर्ग की अन्य विटामिनों के समान पिरिडॉक्सिन भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शरीर की वृद्धि के लिये अनिवार्य है। मनुष्यों और अन्य सभी प्राणियों को अपनी वृद्धि के लिये इस विटामिन की आवश्यकता होती है। भोजनों के पाचन में, विशेष रूप से प्रोटीनों के पाचन में इसका महत्त्वपूर्ण भाग है। ट्रिप्टोफैन से निकोटिनिक अम्ल के बनने में पिरिडॉक्सिन सहायक होता है। पिरिडॉक्सिन शरीर में एक सहएन्जाइम के रूप में कार्य करता है और फॉस्फेट से मिल कर पिरिडॉक्सल फॉस्फेट में परिणत हो जाता है। यह सहएन्जाइम पाचन क्रियाओं में बहुत कार्य करता है।

पिरिडॉक्सिन की उपयोगिता इसकी कमी से उत्पन्न होने वाले लक्षणों के आधार पर निश्चित की जा सकती है। प्राकृतिक भोजनों में इसकी मात्रा पर्याप्त रहने के कारण इसकी कमी से उत्पन्न होने वाले विकार प्रायः दृष्टिगोचर नहीं होते। तथापि भोजन को कृत्रिम रूप से पिरिडॉक्सिन से रहित करके इसके प्रभावों का अध्ययन किया गया।

सबसे पहले इसके परीक्षण चूहों पर किये गये और यह देखा गया कि इस विटामिन की कमी से उनमें एक्रोडीनिया (एक प्रकार की चूहों की त्वचा में शोथ) उत्पन्न हो जाता है। इस विटामिन के न मिलने पर पेशियों की संकोचन की शक्ति नष्ट हो जाती है और यकृत के विकार उत्पन्न होते हैं।

भोजन को इस विटामिन से रहित करके और उस भोजन को मनुष्यों को खिलाकर उन पर भी परीक्षण किये गये। इससे मनुष्यों के रक्त में श्वेताणुओं की संख्या कम हो गई, आँखों के समीप और भौंवों तथा मुख के कोनों की त्वचा में शोथ उत्पन्न हुआ। यह समझा जाता है कि इस विटामिन की कमी से मनुष्यों में पैलाग्रा के से कुछ लक्षण — नींद का न आना, उत्तेजनशीलता और निर्बलता उत्पन्न हो सकते हैं। पिरिडॉक्सिन का प्रयोग करने से ये लक्षण ठीक होते हैं। विशेष प्रकार की अरक्तताओं में भी यह विटामिन उपयोगी सिद्ध हुआ है।

पिरिडॉक्सिन के स्रोत —

प्रायः सभी प्राकृतिक भोजनों में पिरिडॉक्सिन पाया जाता है। विटामिन B संमिश्र वर्ग की अन्य विटामिनों से युक्त भोजनों में यह विटामिन भी पर्याप्त होता है। यीस्ट, चावल का ऊपरी आवरण, अनेक बीज, दालें और अन्नों के अंकुर इसके समृद्ध स्रोत हैं। मांस, मछली और अण्डे की जर्दी में भी यह विटामिन प्रचुर होता है। जन्तुओं के यकृत में भी इसकी पर्याप्त मात्रा होती है।

पिरिडॉक्सिन की आवश्यकता—

जितने भी जन्तुओं का अध्ययन किया गया है, उन सभी को पिरिडॉक्सिन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की आवश्यकता है। मनुष्यों को इस विटामिन की कितनी मात्रा की आवश्यकता है, इसका ठीक-ठीक निर्धारण अभी नहीं हो सका है, तथापि यह अनुमान किया गया है कि शिशुओं को प्रतिदिन 0.3 मिलीग्राम के लगभग विटामिन B_6 की आवश्यकता होती है। वयस्कों को यह विटामिन प्रतिदिन लगभग 2 मिलीग्राम चाहिये। विटामिन B_6 की ये आवश्यकतायें सामान्यतः दैनिक भोजनों से प्राप्त हो जाती हैं।

मनुष्यों की आन्त में इस विटामिन का संश्लेषण सूक्ष्मजीव करते हैं या नहीं, यह अभी संशयास्पद है। तथापि परीक्षणों द्वारा यह देखा गया है कि जितनी मात्रा में इस विटामिन को खिलाया गया, अनेक बार यह उससे अधिक मात्रा में विष्ठा द्वारा उत्सर्जित हुआ।

6. बायोटिन—

बायोटिन भी B संमिश्र वर्ग की विटामिनों में से एक है। इसको बायोस, विटामिन H और सहएन्जाइम आर नाम भी दिये गये थे। बायोटिन को अण्डश्वेत-क्षतिरोधी कारक नाम भी दिया गया था। इसका कारण यह है कि बायोटिन की खोज अण्डे के श्वेत भाग को अधिक मात्रा में चूहों को खिलाकर की गई थी। चूहों को अण्डे के श्वेत भाग के आहार पर रखकर देखा गया कि उनमें निम्न प्रकार से विकार उत्पन्न हुये— पेशियों के कार्य में समन्वय का न रहना, त्वचाशोथ, बालों का गिर जाना, तन्त्रिकाओं के विकार आदि।

परीक्षणों द्वारा यह सिद्ध किया गया कि अण्डे के पीले भाग में बायोटिन नाम का विटामिन होता है। अण्डे के श्वेत अंश में एविडिन नाम का एक पदार्थ है, जो बायोटिन को निष्क्रिय करके इस विटामिन की हीनता उत्पन्न करता है और इससे विकार उत्पन्न होते हैं।

सबसे पहले कोगल नाम के एक वैज्ञानिक ने अण्डे के पीते भाग से इस विटामिन को पृथक् किया था। उसने इसका नाम बायोटिन रखा। 1942 ई० में डू विगनिओड नाम के वैज्ञानिक ने और उसके सहकारियों ने इसकी रासायनिक रचना को जाना तथा 1943 ई० में वैज्ञानिकों ने इसका संश्लेषण करने में सफलता प्राप्त की।

रासायनिक रूप से बायोटिन मोनोकार्बोक्सिलिक अम्ल है। यह जल में अल्प विलेय है। परन्तु इस अम्ल के लवण जल में प्रचुर विलेय होते हैं। इसकी रंगरहित क्रिस्टलीय सुइयां सी होती हैं। यह विटामिन प्रकाश से और ऊँचे तापमान से भी नष्ट नहीं होता। अम्लों और क्षारों को भी यह बहुत समय तक सहन कर सकता है, और उनसे काफी देर तक नष्ट नहीं होता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बायोटिन के कार्य और उसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

प्राय: सभी प्राणियों को और मनुष्यों को भी शरीर की वृद्धि के लिये इस विटामिन की आवश्यकता होती है। अनेक सूक्ष्मजीवियों, यीस्ट और फफूंदी को भी अपनी वृद्धि के लिए इस विटामिन की आवश्यकता है।

बायोटिन में गन्धक का एक अणु होता है और वह शरीर में एन्जाइमों की प्रक्रिया में बहुत सक्रिय भाग लेता है।

भोजनों को बायोटिन से रहित करके और उस भोजन को मनुष्यों और अन्य जन्तुओं को खिला कर परीक्षण किये गये हैं कि इस विटामिन की कमी से कौन से विकार उत्पन्न हो सकते हैं। बायोटिन को निष्क्रिय करने वाले अण्डे के श्वेत भाग को अधिक मात्रा में खिला कर और आन्त्र में बायोटिन का संश्लेषण करने वाले सूक्ष्मजीवियों को निष्क्रिय करने के लिए सल्फा औषधियों को खिलाकर इस प्रकार के परीक्षण किये गये।

बायोटिन के अभाव में चूहों की पेशियों में समन्वय और नियन्त्रण की कमी होने लगी और वे पिछली टाँगों को घसीट कर चलने लगे। उनकी आँखें पपड़ियों से बन्द हो गई, मुख और नाक सूज गये और त्वचा में शोथ हो गई। उनके बाल गिरने प्रारम्भ हो गये। मनुष्यों में इस विटामिन की कमी से इस प्रकार लक्षण उत्पन्न हुये-त्वचा-शोथ, अरुचि, पेशियों में वेदना और अतिसम्वेदिता।

बायोटिन की कमी से मनुष्यों में त्वचा पर विशेष प्रभाव देखे गये हैं। त्वचा सूज जाती है, उस पर से पपड़ियां उतरती हैं, चटखन होती है और त्वचा का रंग पाण्डु हो जाता है। जीभ के अंकुरों का क्षय होता है और रक्त के श्वेताणुओं का ह्रास होता है।

बायोटिन के स्रोत-

वनस्पतियों और जन्तुओं में बायोटिन व्यापक रूप से पाया जाता है। यीस्ट; यकृत, वृक्क, दूध, अंडे का पीला भाग, अनाज और दाल इन सब में इसकी प्रचुर मात्रा होती है।

अंडों में बायोटिन की उपस्थिति का अध्ययन करना एक रोचक विषय है। अंडे के पीले अंश में बायोटिन प्रचुर मात्रा में होता है, जबकि श्वेत अंश में यह नहीं होता। इसके विपरीत इस श्वेत अंश में एविडिन नाम का एक पदार्थ होता है, जो इस विटामिन का विरोधी है। बायोटिन की उपस्थिति सद्दाब (Ruta gravedens) में प्रचुर मात्रा में होती है। इस वनस्पति से इसको व्यापारिक उपयोग के लिये प्राप्त किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आन्तों में सूक्ष्मजीवियों द्वारा भी इस विटामिन का संश्लेषण होता है। प्राणियों के लिये विटामिन का यह स्रोत बहुत महत्वपूर्ण है।

बायोटिन की आवश्यकता—

प्राकृतिक भोजनों में बायोटिन प्रचुर मात्रा में रहता है। इसके अतिरिक्त आन्तों में विद्यमान सूक्ष्मजीवी भी इसका काफी मात्रा में संश्लेषण करते हैं। इस कारण बायोटिन की आवश्यकता को निर्धारित करना विशेष महत्वपूर्ण नहीं है। परीक्षणों से यह देखा गया है कि मनुष्यों को जितनी मात्रा में विटामिन दिया जाता है, उससे अधिक यह विटामिन विष्ठा और मूत्र के मार्ग से उत्सर्जित हो जाता है।

७. फोलिक अम्ल (टेरोइलग्लूटैमिक अम्ल)—

विटामिन B संमिश्र वर्ग की विटामिनों में फोलिक अम्ल की भी गणना की जाती है। पोषण के इतिहास में इस विटामिन की खोज बहुत महत्वपूर्ण रही है। विभिन्न प्रकार की अरक्तताओं की चिकित्सा में इस विटामिन का इस समय प्रचुर प्रयोग किया जा रहा है। इस विटामिन की खोज प्राणियों के पोषण की आवश्यकताओं के परिणामस्वरूप हुई और यह भी देखा गया कि सूक्ष्मजीवियों को भी अपनी वृद्धि के लिये इस विटामिन की आवश्यकता होती है। हरी पत्तियों में इस विटामिन के प्रचुर मात्रा में होने के कारण इसको फोलिक अम्ल नाम दिया गया। लैटिन भाषा में पत्ते के लिये फोलियम शब्द आता है।

फोलिक अम्ल की खोज विभिन्न वैज्ञानिकों ने विभिन्न समयों में विभिन्न प्रयोजनों के लिये की। इस कारण विभिन्न अवस्थाओं में इस विटामिन के अनेक नाम रखे गये। इसको विटामिन M (बन्दरों=मन्कीज में रक्त को उत्पन्न करने वाला कारक) विटामिन B_c (चूजों की वृद्धि करने वाला कारक), कारक R (जीवाणुओं की वृद्धि करने वाला कारक), एल. केसीकारक (लैक्टोबेसीलस केसी की वृद्धि करने वाला कारक) नाम दिये गये। इस विटामिन को विटामिन B_{10} और विटामिन B_{11} भी नाम दिये गये थे।

फोलिक अम्ल की परीक्षणात्मक खोज मुख्य रूप से तीन स्थानों पर हुई और इन तीनों ही स्थानों पर इस सक्रिय पदार्थ को अलग-अलग नाम दिया गया। बाद में परीक्षणों से सिद्ध हुआ कि ये तीनों सक्रिय पदार्थ एक ही थे। यीस्ट, यकृत और पालक से एक सक्रिय पदार्थ को खोजा गया। यह पदार्थ लैक्टोबेसीलस केसी नामक जीवाणु की वृद्धि के लिये और हीमोग्लोबिन की रचना के लिये अनिवार्य सिद्ध हुआ।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसको एल, कैसी कारक नाम दिया गया। एक पोषक तत्व विटामिन M की खोज हुई, जो बन्दरों की वृद्धि के लिये अनिवार्य सिद्ध हुआ। एक पोषक तत्व विटामिन B_0 की खोज हुई, जिसके अभाव में चूहों में घातक अरक्तता के लक्षण उत्पन्न हुये।

1944 ईसवी में वैज्ञानिकों ने यकृत, यीस्ट और अन्य प्राकृतिक स्रोतों से एक क्रिस्टलीय पदार्थ प्राप्त किया था, जो ऊपर कहे गये सभी पदार्थों से युक्त था। 1945 ईसवी में इस पदार्थ का पूरा संश्लेषण हो सका और इसकी रासायनिक रचना के कारण इसको टेरोइलग्लूटैमिक अम्ल नाम दिया गया। 1946 ईसवी में लेडरले कम्पनी की प्रयोगशाला के वैज्ञानिकों ने फोलिक अम्ल के पृथक्करण, रासायनिक रचना और संश्लेषण का पूरा वर्णन किया था।

फोलिक अम्ल पीले रंग का एक स्फटिकीय पदार्थ है और जल में 0·1 प्रतिशत तक विलेय है।

शरीर में रुधिर की वृद्धि के लिये फोलिक अम्ल को अनिवार्य समझा जाता है। यह विटामिन अस्थि की मज्जा को सक्रिय करता है तथा रक्ताणुओं और श्वेताणुओं की वृद्धि करने में सहायक होता है। हीमोग्लोबिन की रचना के लिये भी यह एक अनिवार्य तत्व है।

शरीर में फोलिक अम्ल सहएन्जाइम के रूप में कार्य करके अनेक पाचन क्रियाओं में भाग लेता है तथा इसके अभाव में शरीर में नये उत्पन्न अणु परिपक्व नहीं होते।

फोलिक अम्ल से रहित भोजनों को खिला कर इसकी कमी से उत्पन्न लक्षणों का अध्ययन किया गया है। इस विटामिन की कमी से रक्त की कमी हो जाती है। इससे रक्त में रक्ताणु और श्वेताणु दोनों ही कम हो जाते है। हीमोग्लोबिन अंश भी कम हो जाता है। इससे अतिसार, आमाशय और आन्तों में क्षत तथा अन्य लक्षण उत्पन्न होते हैं।

फोलिक अम्ल का विभिन्न प्रकार की अरक्तताओं में प्रचुर प्रयोग किया जा रहा है। इसको B संमिश्र वर्ग की अन्य विटामिनों के साथ देना अधिक उपयोगी है। यह देखा गया है कि फोलिक अम्ल को देने से यद्यपि रक्त में रक्ताणुओं, श्वेताणुओं और हीमोग्लोबिन की मात्रा में बहुत शीघ्र वृद्धि होती है, तथापि रोग पुनः उत्पन्न न हो, इसके लिये इसको बड़ी मात्रा में लम्बे समय तक देना चाहिये। अरक्तता के कारण उत्पन्न अतिसार और संग्रहणी के लिये फोलिक अम्ल की चिकित्सा उपयोगी है, परन्तु तन्त्रिका के लक्षणों में इससे लाभ नहीं होता। इसके लिये साथ में विटामिन B_{12} भी देना उपयोगी होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फोलिक अम्ल के स्रोत—

हरी पत्तेदार वनस्पतियों और यीस्ट में फोलिक अम्ल प्रचुरता से होता है। हरे पत्तों में इस विटामिन की मात्रा 100 ग्राम में 30 से 100 माइक्रोग्राम तक हो सकती है। अन्नों में भी यह विटामिन कुछ मात्रा में होता है। फोलिक अम्ल सबसे अधिक यकृत में होता है तथा 100 ग्राम यकृत में 300 माइक्रोग्राम तक यह विटामिन हो सकता है।

जन्तुओं की आन्तों में विद्यमान जीवाणु फोलिक अम्ल का प्रचुर मात्रा में संश्लेषण करते हैं। मनुष्यों के लिये इस विटामिन का यह एक उत्तम स्रोत है।

फोलिक अम्ल की आवश्यकता—

मनुष्यों और अन्य जन्तुओं को पोषण के लिये फोलिक अम्ल की अनिवार्य आवश्यकता है। विभिन्न आवश्यकताओं का अध्ययन करके इसकी पोषण सम्बन्धी आवश्यकताओं के और रोग को नष्ट करने वाली मात्राओं के आँकड़े दिये गये हैं। मनुष्यों को विभिन्न खाद्य पदार्थों से यह विटामिन प्राप्त होता ही है, आन्तों में भी सूक्ष्मजीवियों द्वारा इसका संश्लेषण किया जाता है। इसलिये इसकी पोषण सम्बन्धी मात्रा का ठीक-ठीक निर्धारण कठिन है। तथापि अनुमान किया गया है कि मनुष्यों में स्वास्थ्य को बनाये रखने के लिये इस विटामिन की 0·5 से 1·0 मिलीग्राम की दैनिक मात्रा पर्याप्त है।

8. इनोसिटोल—

इनोसिटोल भी B संमिश्र वर्ग की विटामिनों में से एक विटामिन है। यद्यपि इसकी खोज 1850 ई० में ही हो चुकी थी, तथापि इसकी पोषण की शक्ति की सार्थकता का प्रतिपादन 1928 ई० में हुआ था, जबकि ईस्ट कास्ट ने इस पदार्थ को चाय से पृथक् किया और बताया कि यीस्टों की वृद्धि के लिये इसका होना अनिवार्य है। छोटे जन्तुओं पर परीक्षण करके पोषण के लिये इसकी अनिवार्यता को सिद्ध किया गया था।

इनोसिटोल का संश्लेषण भी किया जा चुका है, परन्तु व्यापारिक दृष्टि से यह संश्लेषण लाभप्रद नहीं है। इनोसिटोल प्राकृतिक पदार्थों में प्रचुर होता है तथा उनसे इसको सरलता से पृथक् भी किया जा सकता है। इनोसिटोल के संश्लेषण की उपयोगिता केवल इसकी रासायनिक रचना को सिद्ध करने की दृष्टि से है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनोसिटोल श्वेत रंग का क्रिस्टलीय चूर्ण है। यह जल में विलेय है।

इनोसिटोल के कार्य और इसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

मनुष्यों के शरीर में इनोसिटोल का पोषणात्मक उपयोग क्या है, इसको पूरी तौर से निर्धारित नहीं किया जा सका है। छोटे जन्तुओं, विशेष रूप से चूहों पर इस विटामिन की कमी के प्रभावों की परीक्षा की गई है। चूहों को इनोसिटोल से रहित भोजन देने से उनके बाल झड़ गये और उनका बढ़ना कम हो गया। उनके शरीर में सूजन हो गई और आंखों के समीप के बाल नष्ट हो गये। इनोसिटोल देने पर ये लक्षण ठीक हो गये। यह भी देखा गया कि इस विटामिन की कमी होने पर वसीय यकृत (एक प्रकार का यकृत का रोग, जिसमें यकृत में वसा जमनी प्रारम्भ हो जाती है) होता है। इससे सिद्ध हुआ कि यह विटामिन शरीर में वसा के पाचन को नियन्त्रित करता है।

यह देखा गया है कि अनेक प्राणियों के शुक्र के प्लाज्मा में इनोसिटोल प्रचुर मात्रा में होता है। सबसे अधिक इनोसिटोल सुअर के शुक्र के प्लाजा में पाया गया है, जिसमें यह प्रति 100 मिलीलीटर में 600–700 माइक्रोग्राम था। मनुष्य, सांड, खरगोश, मेंढा और बीजाश्व (सांड घोड़ा) के शुक्रीय प्लाज्मा में इनोसिटोल 100 मिलीग्राम में 100 माइक्रोग्राम मिला है।

इनोसिटोल के स्रोत और इसकी आवश्यकता—

सभी प्रकार के वनस्पतिज और जान्तव भोजनों में इनोसिटोल और इसके यौगिक प्रचुर मात्रा में होते हैं। इसलिये इसके स्रोतों की अधिक विवेचना की आवश्यकता नहीं है। इसकी न्यूनता के लक्षणों को मनुष्यों में पाया नहीं गया। चूहों में भी नियन्त्रित आहार खिलाकर ही इसकी कमी से उत्पन्न लक्षण विकसित किये गये थे। इन कारणों से इसकी आवश्यकता को निर्धारित करने की आवश्यकता नहीं समझी गई।

9. कोलिन—

कोलिन की गणना भी B संमिश्र वर्ग की विटामिनों में की गई है और इसकी विवेचना विटामिनों के साथ ही की जाती है। परन्तु अनेक वैज्ञानिकों के अनुसार यह विटामिन नहीं है।

रासायनिक रूप से कोलिन पसीजने वाले क्रिस्टलीय चूर्ण के रूप में होता है, जो जल में प्रचुर विलेय है।

कोलिन शरीर में एन्जाइमों की क्रिया में भाग लेता है। एन्जाइमों की क्रिया से एसीटिलकोलिन नाम का पदार्थ बनता है, जो शरीर की अनेक क्रियाओं को

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादित करने के लिये अनिवार्य है। कोलिन से शरीर में लेसिथिन, होमोसिस्टिन और मेथियोनाइन नामक प्रोटीनें भी बनती हैं। मेथियोनाइन शरीर के पोषण के लिये एक अनिवार्य प्रोटीन है। आहार में यदि मेथियोनाइन है, तो यह शरीर की कोलिन की आवश्यकता को पूरा कर सकती है।

कोलिन को वसा-नियन्त्रक कारक समझा जाता है। इस विटामिन की कमी होने पर यकृत में वसा का संचय होने लगता है। इससे यकृत और वृक्क में रक्तस्राव हो सकता है।

मनुष्यों में कोलिन की आवश्यकता 1·5 से 3 0 ग्राम प्रतिदिन निर्धारित की गई है। प्राकृतिक भोजनों में यह प्रचुर मात्रा में प्राप्त हो जाती है।

10. पैरा-एमिनो-बेन्जोइक अम्ल—

पैरा-एमिनो-बेन्जोइक अम्ल B संमिश्र वर्ग का एक और विटामिन है। यद्यपि इस अम्ल का ज्ञान एक रसायन के रूप में वैज्ञानिकों को बहुत पहले से था, परन्तु 1940 ई० से पहले तक इसके पोषण सम्बन्धी कार्यों का ज्ञान नहीं हुआ था। इस समय वुड्स नामक वैज्ञानिक ने यह परीक्षण किया कि यह पदार्थ सल्फोनामाइड नामक औषधि को जीवाणुओं को नष्ट करने के सामर्थ्य का निरोध करता है।

सल्फोनामाइड और पैरा-एमिनो बेन्जोइक अम्ल की रासायनिक रचना लगभग एक सी है, परन्तु इन दोनों पदार्थों के प्रभाव एक-दूसरे के विपरीत हैं। सल्फोनामाइड को विटामिन रोधी समझा जा सकता है।

पैरा-एमिनो-बेन्जोइक अम्ल का मनुष्यों में पोषण पर क्या प्रभाव है, एवं मनुष्य को विटामिन के रूप में इसकी क्या आवश्यकता है, इस विषय पर अभी तक कुछ अधिक जाना नहीं जा सका है। प्राणियों के शरीर में इस विटामिन के न पहुँचने के प्रभावों का अध्ययन छोटे जन्तुओं पर किया गया है। इस विटामिन के कम होने का प्रभाव बालों के रंग पर पड़ता है और वे श्वेत हो जाते हैं।

11. सायनोकोबालेमिन (विटामिन B_{12})

सायनोकोबालेमिन या विटामिन B_{12} का B संमिश्र वर्ग की विटामिनों में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। दुष्ट अरक्तता के लिए आजकल इसका प्रचुर प्रयोग किया जा रहा है।

सायनोकोबालेमिन की खोज 1948 ई० में हुई, जबकि अमेरिका के रिक्स नामक वैज्ञानिक ने और इंगलैंड के लेस्टर स्मिथ ने यकृत से विटामिन B_{12} को पृथक् किया और प्रदर्शित किया कि यह पदार्थ दुष्ट अरक्तता के लिये अत्यधिक उपयोगी है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चिकित्सा के लिये विटामिन B_{12} को प्राप्त करना सरल नहीं था। यह देखा गया कि एक टन यकृत से 20 मिलीग्राम विटामिन प्राप्त हो सकता था। इस पर और परीक्षण किये गये। यह देखा गया कि स्ट्रेप्टोमाइसीज ग्रीसियस की, जिससे कि स्ट्रेप्टोमाइसिन तैयार किया जाता है, प्रक्रियाओं के द्रव में विटामिन B_{12} बनता है; यह भी देखा गया कि इस द्रव से प्राप्त विटामिन B_{12} और यकृत से प्राप्त विटामिन B_{12} एक ही पदार्थ हैं। इससे विटामिन B_{12} के संश्लेषण में बहुत सहायता मिली।

विटामिन B_{12} में चार प्रतिशत कोबाल्ट होता है तथा कोबाल्ट के एक अणु के साथ फॉस्फोरस के तीन अणु संयोजित होते हैं। इसकी संरचना में CN वर्ग भी होता है, जिसके कारण इस पदार्थ का नाम सायनोकोबालेमिन हुआ। शुद्ध विटामिन B_{12} गुलाबी रंग के स्वाद रहित एवं गन्ध रहित क्रिस्टल हैं, जो 300° सेन्टीग्रेड तापमान पर बिना पिघले विघटित हो जाते हैं। एक ग्राम विटामिन के क्रिस्टल 80 मिलीलीटर जल में घुल जाते हैं।

विटामिन B_{12} के कार्य और उसकी कमी से उत्पन्न लक्षण—

शरीर में विटामिन B_{12} का मुख्य कार्य रक्त के निर्माण को प्रोत्साहित करना है। रक्त के निर्माण के साथ कोबाल्ट नामक खनिज का विशेष सम्बन्ध है और यह रक्ताणुओं की वृद्धि को उद्दीप्त करता है। परन्तु कोबाल्ट की अत्यल्प मात्रा ही यह कार्य करती है। इसकी अत्यधिक मात्रा रक्ताणुओं की वृद्धि को निरुत्साहित करती है। विटामिन B_{12} में कोबाल्ट की अल्प यात्रा (4 प्रतिशत) होती है। रक्त की रचना बहुत कुछ अस्थिमज्जा के द्वारा होती है। अस्थिमज्जा की रचना के लिये विटामिन B_{12} अनिवार्य है। अस्थिमज्जा की रचना को प्रोत्साहित करके विटामिन B_{12} रक्त की मात्रा में वृद्धि करता है और इस प्रकार यह विटामिन शरीर की वृद्धि और पोषण के लिये अनिवार्य तत्त्व है।

कैसल नामक वैज्ञानिक ने एक रोधक परीक्षण करके बताया कि मनुष्यों में होने वाले दुष्ट अरक्तता रोग के साथ इस विटामिन की कमी का विशेष सम्बन्ध है। उसने बताया कि दुष्ट अरक्तता दो तत्त्वों की कमी के कारण होती है। इनमें से एक तत्त्व आमाशय में रहता है और यह आन्तर तत्त्व है। यह तत्त्व म्यूकोप्रोटीन है और आमाशय रस में रहता है। दूसरा तत्त्व बाहर से प्राप्त होता है और यह तत्त्व विटामिन B_{12} है। म्यूकोप्रोटीन के होने पर विटामिन B_{12} का अवशोषण होता है और इसके विद्यमान न होने पर इस विटामिन का अवशोषण नहीं होता। विटामिन B_{12} का अवशोषण न होने पर अरक्तता रोग होता है। आमाशय रस में इस आन्तर कारक के न होने पर यदि मुख द्वारा विटामिन B_{12} दिया जावे, तो इस विटामिन का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अवशोषण नहीं होगा तथा यह विष्ठा के साथ शरीर से बाहर निकल जावेगा। अरक्तता रोग में आमाशय रस में म्यूकोप्रोटीन की भी कमी हो जाती है। यही कारण है कि इस रोग में विटामिन B_{12} को मुख द्वारा देने पर कोई लाभ नहीं होता। इस समय इस विटामिन को इन्जेक्शन द्वारा अल्प मात्रा में भी शरीर के अन्दर पहुँचा देने पर अरक्तता रोग में स्पष्ट लाभ होता है।

शरीर में प्रोटीनों के उपयोग पर भी विटामिन B_{12} प्रभावशाली कार्य करता है और इस प्रकार शरीर के पोषण और वृद्धि के लिये बहुत उपयोगी होता है। उचित पोषण को प्राप्त न करने वाले व्यक्ति के लिये यह विटामिन औषधि के रूप में लेने से बहुत लाभकारी होता है। यह विटामिन वसा-नियन्त्रक का भी कार्य करता है और यकृत में वसा का संचय नहीं होने देता।

विटामिन B_{12} के स्रोत और उसकी आवश्यकता—

वनस्पतिज खाद्य पदार्थों में विटामिन B_{12} नहीं होता, इसलिये मनुष्य इस विटामिन की प्राप्ति के लिये भोजनों पर निर्भर नहीं है। बड़ी आन्त्र में विद्यमान सूक्ष्मजीवी इस विटामिन का संश्लेषण करते हैं। यह संश्लेषण मनुष्य की आवश्यकता से बहुत अधिक होता है और आवश्यकता से अधिक इस विटामिन की बहुत बड़ी मात्रा विष्ठा के साथ शरीर से बाहर निकल जाती है। शरीर में इस विटामिन की कमी और उससे उत्पन्न लक्षण इसलिये नहीं होते कि इस विटामिन की उत्पत्ति कम है, परन्तु इस कारण होते हैं क्योंकि इसका अवशोषण किन्हीं विशेष कारणों से नहीं हो रहा होता।

यकृत और वृक्कों में विटामिन B_{12} प्रचुर मात्रा में होता है। जन्तुओं और मछलियों की पेशियों में इसकी अल्प मात्रायें रहती हैं।

मनुष्यों में विटामिन B_{12} की आवश्यकताओं को ठीक प्रकार से मापा नहीं जा सका है। तथापि यह अनुमान किया गया है कि एक व्यक्ति को लगभग एक मिलीग्राम विटामिन की प्रतिदित आवश्यकता होती है। अरक्तता की चिकित्सा के लिये इस विटामिन को बहुत बड़ी मात्रा में इन्जेक्शन द्वारा दिया जाता है।

ऐस्कॉर्बिक अम्ल (विटामिन C)

लम्बे समय तक हरी सब्जियों और फलों को न लेने पर स्कर्वी रोग उत्पन्न होता है, इस तथ्य को बहुत पहले ही जान लिया गया था। शताब्दियों पहले इस रोग की चिकित्सा के लिये भोजन में ताजी हरी सब्जियों को और फलों को, विशेष रूप से नीबू को सम्मिलित करने की सिफारिश की गई थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यूरोपीय देशों में समुद्री यात्राओं का बहुत अधिक विकास हुआ था। इन देशों के नाविक सुदूर देशों की खोज के लिये और उन देशों के साथ व्यापार आदि का सम्बन्ध बनाने के लिये लम्बी समुद्री यात्राओं पर निकल जाते थे। इन समुद्री यात्राओं में, जहाँ कि महीनों तक ताजा भोजन प्राप्त नहीं होता था और नाविकों को अपनी मातृभूमि से लाये गये भोजन पर ही निर्भर करना होता था, स्कर्वी रोग का उनमें बहुत अधिक प्रसार देखा गया। कहा जाता है कि पुर्तगाल के वास्कोडिगामा के साथ जहाज पर 180 नाविक थे। भारतवर्ष तक पहुँचने में इन 180 नाविकों में से 100 नाविकों की मृत्यु स्कर्वी रोग से हो गई। 1536 ई० में न्यूफाउण्डलैंड में जैकेस कर्टियर के 110 आदमियों में से 100 आदमियों की मृत्यु इसी रोग के कारण हो गई थी।

समुद्री यात्राओं में इंग्लैण्ड का स्थान सबसे आगे हो गया था और इंगलिश नाविक लम्बी समुद्री यात्रायें किया करते थे। उनमें इस रोग का तीव्र प्रसार हुआ। उस समय इंग्लैण्ड के चिकित्सकों ने नाविकों को भोजन में नीबू देने की सिफारिश की। इसका अत्यधिक चमत्कारिक प्रभाव हुआ। नाविकों में स्कर्वी रोग की घटनायें बहुत कम हो गईं। नीबुओं का अधिक सेवन करने के कारण अंग्रेज नाविकों को लिमी कहा जाने लगा और नीबुओं का निर्यात करने के कारण लण्डन के जहाजी घाट को नीबूघर (लाइम हाउस) कहा जाने लगा।

नीबू के रस में ऐसा कौनसा पदार्थ है, जो स्कर्वी रोग का निरोध करता है, इस बात को जानने के लिये वैज्ञानिक निरन्तर परीक्षण करते रहे। जिल्वा नामक एक वैज्ञानिक ने नीबू के रस से एक अपचायक-सार तत्त्व को पृथक् किया, जो स्कर्वी के रोकने के लिये एक प्रबल औषधि सिद्ध हुआ। इसके बाद शेन्ट ज्योर्जी ने चूहों की अधिवृक्क ग्रन्थि से और नीबू जाति के फलों के रसों से एक तीव्र अपचायक पदार्थ को अलग किया और इसका नाम हेक्सूरोनिक अम्ल रखा। परीक्षण करने पर वैज्ञानिकों ने देखा कि जिल्वा द्वारा प्राप्त किया गया पदार्थ और हेक्सूरोनिक अम्ल एक ही पदार्थ थे। ये पदार्थ अम्लीय थे और इनमें विटामिन C की सक्रियता थी। इन स्कर्वीरोधी पदार्थों को ऐस्कॉर्बिक अम्ल या विटामिन C नाम दिया गया।

विशुद्ध विटामिन C गन्ध से रहित श्वेत क्रिस्टलीय चूर्ण के रूप में होता है। इसका स्वाद खट्टा होता है। यह जल में प्रचुर विलेय है। तीन मिलीग्राम जल में एक ग्राम तक विटामिन C घुल जाता है। 1933 ई० में इस विटामिन का प्रयोगशालाओं में संश्लेषण कर दिया गया था। इस समय बाजार में यह संश्लिष्ट विटामिन बहुत अधिक परिमाण में प्राप्त है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन C के कार्य और इसकी कमी से उत्पन्न लक्षण

ऐस्कॉर्बिक अम्ल का मुख्य कार्य शरीर की कोशिकाओं को स्थिर रखने वाले सीमेन्ट पदार्थ की रचना में भाग लेना है। अस्थियों और दान्तों के कठोर पदार्थ (मैट्रिक्स तथा डेन्टाइन) की रचना में इस विटामिन का बहुत महत्त्व है। इसके अतिरिक्त शरीर के अन्य संयोजी अवयवों की रचना में भी यह योग देता है। यदि विटामिन C न हो तो इन पदार्थों की रचना करने वाले तत्त्व द्रव अवस्था में ही रहेंगे। इनको ठोस रूप में लाने के लिये विटामिन C का होना अनिवार्य है। शरीर की वाहिकाओं— धमनी, शिरा, लसीकावाहिनी आदि की स्वाभाविक रचना के लिये विटामिन C को अनिवार्य रूप से प्राप्त होना चाहिये। इस विटामिन के न मिलने पर विभिन्न अगों की छोटी रक्तवाहिनियों से रक्तस्राव होने लगता है।

घावों के हो जाने पर शरीर के तन्तुओं और कोशिकाओं की रचना के लिये विटामिन C का होना अनिवार्य है। इसके कम होने पर घाव या तो बहुत देर से भरते हैं या भरते नहीं हैं। घावों के जल्दी भरने के लिये विटामिन C दिया जाता है। घाव जल्दी भरें, इस प्रयोजन के लिये शल्यक्रियाओं से पहले और बाद में विटामिन C देने की परम्परा हो गई।

शरीर में रोगों के प्रति और रोगोत्पादक जीवाणुओं के प्रति प्रतिरोधक शक्ति विटामिन C द्वारा उत्पन्न होती है। इस विटामिन की कमी होने पर रोगों का संक्रमण बहुत शीघ्र हो सकता है। संक्रमणों द्वारा उत्पन्न किये गये विष को शरीर से बाहर निकालने के लिये भी यह विटामिन कार्य करता है। इस प्रकार शरीर की निर्विषीकरण प्रक्रियाओं के लिये यह विटामिन अनिवार्य है। विटामिन C कार्बोहाइड्रेटों के पाचन में भी सहायक है।

फोलिक अम्ल के उपापचय के लिये विटामिन C की आवश्यकता होती है। शरीर में कैल्सियम और लोह के अवशोषण के लिये भी यह विटामिन आवश्यक है। इस कारण कैल्सियम को विटामिन D और विटामिन C से सम्पूरित करके और लोह को विटामिन C से सम्पूरित करके देना चाहिये।

विटामिन C की कमी होने पर शरीर की नई कोशिकाओं के बनने में बाधा होती है। घाव देर से भरते हैं और टूटी अस्थियाँ देर से जुड़ती हैं। अस्थि तत्व को बनाने वाले अणु अस्थिकल्प की रचना नहीं करते। इससे अस्थियों में अस्थि खनिजों का निक्षेप होना रुक जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन C की कमी से शरीर का पोषण उचित मात्रा में नहीं होता और अन्त में स्कर्वी रोग उत्पन्न होता है।

विटामिन C की कमी से उत्पन्न होने वाले विकारों में स्कर्वी रोग सबसे महत्वपूर्ण है। इसका सबसे पहला लक्षण आमाशय और आन्तों में प्रकट होता है। इसके बाद धमनियों और केशिकाओं से रक्तस्राव होने लगता है। इसके बाद मसूढ़ें सूज जाते हैं और दाँत ढीले हो जाते हैं। सन्धियाँ सूजी हुई और कठोर हो जाती हैं तथा इनमें वेदना होती है। तदनन्तर अरक्तता होती है। श्वास लेने में कठिनाई होती है और सारे शरीर पर शोफ हो सकता है। रोगी उत्तेजनशील, चिड़चिड़ा और कार्य करने के प्रति उदासीन हो जाता है। विटामिन C की बड़ी मात्राओं के प्रयोग करने से इन अवस्थाओं में निश्चित रूप से सुधार होता है।

विटामिन C के स्रोत—

वनस्पतिज भोजन विटामिन C के अधिक समृद्ध स्रोत हैं। जान्तव भोजनों में यह विटामिन या तो बिल्कुल नहीं होता या अत्यल्प मात्रा में होता है। अनेक फलों और सब्जियों में इसकी बहुत अधिक मात्रा होती है।

भारतवर्ष में उत्पन्न होने वाले फलों में विटामिन C सबसे अधिक आंवले में होती है। प्रति 100 ग्राम आंवले में 500–600 मिलीग्राम विटामिन C होती है। आंवले में यह विटामिन इतनी अधिक मात्रा में है कि इसको सुखाने, पकाने आदि के के बाद भी यह बहुत अधिक मात्रा में बनी रहती है। नींबू जाति के फल— नींबू, मौसमी, सन्तरा आदि भी इस विटामिन के समृद्ध स्रोत हैं। अंगूर, पपीता, आम और टमाटर में भी यह पर्याप्त मात्रा में होती है। ताजी सब्जियों में— करमकल्ला, अजमोदा, सुहान्जना, बन्दगोभी, सलाद आदि में भी इसकी अच्छी मात्रा होती है। रोजहिप में, जो कि यूरोप में अधिक होता है, इसकी सबसे अधिक मात्रा पाई गई है। 100 ग्राम रोजहिप में 5000 मिलीग्राम तक विटामिन C हो सकती है। यूरोप में इसका प्रयोग शर्बत आदि के रूप में बच्चों, गर्भवती स्त्रियों और प्रसूता स्त्रियों को कराया जाता है।

वनस्पतियों में जल-वायु, भूमि की अवस्था, पौधों के विभिन्न अवयव आदि के अनुसार विटामिन C की मात्रा कम या अधिक हो सकती है।

सूखे अनाजों और दालों में विटामिन C प्रायः नहीं होता। परन्तु इन अनाजों को अंकुरित किया जाने पर उनमें यह विटामिन प्रचुर मात्रा में उत्पन्न हो जाता है। भारतवर्ष में अनेक परिवारों में अनाजों को अंकुरित करके, विशेष रूप से त्यौहारों के अवसरों पर खाने की प्रथा है। इस प्रकार अनाजों को अंकुरित करने से उनमें

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन C तो उत्पन्न होता ही है, विटामिन B संमिश्र वर्ग की अनेक विटामिनें भी उत्पन्न होती हैं और इससे विटामिनों की बहुत बड़ी आवश्यकता पूरी हो जाती है। दूध, मांस, मछली और अण्डे में इस विटामिन की अत्यल्प मात्रा होती है।

निम्न तालिका में विभिन्न भोजनों के विटामिन C अंश दिये गये हैं—

भोजन	प्रति 100 ग्राम भोजन में विटामिन C मिलीग्राम मात्रा में
अनाज—	
गेहूँ	0
चावल	0
जौ	0
मक्का	0
जई	0
अंकुरित गेहूँ	25
दालें —	
चना साबुत	3
चना दाल	1
मूंग साबुत	1
मूंग दाल	0
सब्जियाँ—	
चुकन्दर	88
गाजर	3
आलू ताजा	25
आलू सञ्चित किया हुआ	7
मूली	15
शलजम	43
शकरकन्दी	24
बथुआ	99
पत्तागोभी	124
सुहान्जना	220

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मूली के पत्ते	103
पालक	28
बन्दगोभी	56
सेम की फली	49
बड़ी मिर्च	137
भिण्डी	13
पान का पत्ता	5
फल—	
आंवला	500–600
सन्तरा	40
नींबू का रस	63
सेव	2
मौसम्मी	50
अनन्नास	39
आम	13
पपीता	57
टमाटर	27
अंगूर	31
अमरुद	212
काजू हरा फल	180
गिरियाँ —	
नारियल की गिरि	7
दूध —	
गाय का दूध	2
भैंस का दूध	3
बकरी का दूध	1
मानव दूध	3
दूध का चूर्ण (मक्खन निकला हुआ)	5
दूध का चूर्ण (सम्पूर्ण)	4

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मांस और अण्डे—	
भेड़ का मांस (यकृत)	20
सूअर का मांस	2
अण्डा मुर्गी का	0

विटामिन C की आवश्यकता—

मनुष्य को विटामिन C की निश्चित आवश्यकता होती है और वह अपनी इस आवश्यकता को बाहर से भोजनों द्वारा पूरा करता है। मनुष्य के शरीर में इस विटामिन का संश्लेषण नहीं होता। परन्तु कुछ जन्तु अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिये इस विटामिन का संश्लेषण अपने शरीर में कर लेते हैं। परीक्षणों द्वारा यह देखा गया है कि मनुष्य और वानर जाति के प्राणी तथा गिनीपिग अपने शरीर में विटामिन C का संश्लेषण नहीं करते। इनको इस विटामिन की अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति भोजनों से ही करनी होती है। मनुष्यों के लिये इस विटामिन की आवश्यकता को निर्धारित करते समय इस तथ्य को ध्यान में रखना चाहिये।

मनुष्यों के लिये विटामिन C की आवश्यकता का यद्यपि बहुत अधिक अध्ययन किया गया है, तथापि जिन मात्राओं की सिफारिश की गई है, वे बहुत अधिक विशुद्ध परीक्षणों के आधार पर नहीं हैं। तथापि इस विटामिन की आवश्यकताओं को निर्धारित करने के लिये अनेक परीक्षण किये गये हैं तथा यह प्रदर्शित किया गया है कि यदि प्रति दिन 10 मिलीग्राम विटामिन C एक वयस्क व्यक्ति को मिलती रहे तो वह स्कर्वी रोग से पीडित नहीं होगा तथा 30 मिलीग्राम विटामिन C उसको प्रतिदिन मिलती रहे तो उसका सामान्य स्वास्थ्य ठीक बना रहेगा।

भारतवर्ष में भारतीय चिकित्सा शोध संस्था ने सिफारिश की है कि बच्चों को प्रतिदिन 30–50 मिलीग्राम विटामिन C मिलनी चाहिये। वयस्कों के लिये 50 मिलीग्राम विटामिन C की प्रतिदिन की सिफारिश की गई है। संयुक्त राज्य अमेरिका में वयस्कों के लिये विटामिन C की सिफारिशी मात्रा 75 मिलीग्राम प्रतिदिन और बच्चों के लिये 30 से 75 मिलीग्राम है।

गर्भावस्था और दूध पिलाने की अवधि के लिये अधिक विटामिन C की आवश्यकता है और यह 100 मिलीग्राम प्रतिदिन तक होनी चाहिये।

चोट लगने पर, शल्यक्रिया होने पर, विभिन्न संक्रामक रोगों की अवस्थाओं में और अन्य शारीरिक विकारों में विटामिन C की अधिक मात्राओं की आवश्यकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होती है। यह आवश्यकता भोजन से पूरी नहीं हो सकती। इस समय भोजन के अतिरिक्त प्रायः 100 मिलीग्राम विटामिन C प्रतिदिन ओषधि के रूप में दी जाती है। इस मात्रा को 500 मिलीग्राम तक बढ़ाया जा सकता है।

विटामिन C का स्थायित्व—

शरीर के लिये विटामिन C की आवश्यकता का और इस विटामिन के आहार के स्रोतों का अध्ययन करते हुये इस तथ्य को भी ध्यान में रखना चाहिये कि इस जलविलेय विटामिन का प्रभाव बहुत शीघ्र और आसानी से नष्ट हो जाता है।

वायु में भोजन के पदार्थों को खुला रखने से, अधिक गर्मी से और भोजनों को धातुओं के पात्रों में रखने से यह विटामिन शीघ्र नष्ट होती है। ताजे फलों और सब्जियों में यह विटामिन अधिक होती है, परन्तु इनके लम्बे समय तक रखे रहने पर यह धीरे-धीरे कम होती जाती है। क्षारीय माध्यम में भोजनों को पकाने से यह विटामिन बहुत शीघ्र नष्ट हो जाती है। अम्लीय माध्यम इस विटामिन की रक्षा करते हैं। इस कारण क्षारीय माध्यम में भोजनों को पकाना, जैसे— खाने का सोडा डालकर भोजन को पकाना इस विटामिन को नष्ट करना है।

विटामिन C जल में विलेय है, इसलिये भोजनों को पानी में पका कर उस पानी को फेंक देने से यह विटामिन भी फिंक जाती है। सब्जियों को काटने से पहले ही धोना चाहिये। काटने के बाद धोने से उनका विटामिन अंश नष्ट होता है।

फलों और सब्जियों को यथासम्भव ताजा ही लेना चाहिये। यदि उनको कुछ समय तक रखना ही हो तो शीतल स्थान पर रखना चाहिये। शीतलता इस विटामिन की रक्षा करती है। फलों को काटकर नहीं रखना चाहिये। कटे हुये फलों का शीघ्र से शीघ्र उपयोग कर लेना चाहिये।

फलों और सब्जियों को बिना पकाये कच्चा खाने की आदत डालनी चाहिये। पकाने से इस विटामिन का और अन्य अनेक विटामिनों का नाश हो जाता है। पकाई हुई सब्जियों का भी यथाशीघ्र उपयोग कर लेना चाहिये। पकी हुई वस्तुओं को देर तक रखने से उनकी विटामिन नष्ट होती है। पकाने की अवधि भी कम से कम रखनी चाहिये। भोजन को गरम रखना भी उसकी विटामिन को नष्ट करना है। पकाने के बाद भोजन को शीशे के, मिट्टी के या चीनी मिट्टी के बर्तनों में रखना चाहिये, क्योंकि धातुओं के बर्तनों के स्पर्श से यह विटामिन शीघ्र नष्ट होती है।

आजकल डिब्बाबन्द भोजनों के प्रयोग का रिवाज बढ़ता जा रहा है। डिब्बे बन्द करने से पहले भोजन के पदार्थों को पकाना पड़ता है। इससे इनके विटामिन C

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अंश कम हो जाते हैं। विटामिन की इस कमी को पूरे तौर से रोकना तो सम्भव नहीं है, तथापि इसको नष्ट होने से कुछ तो रोका ही जा सकता है। डिब्बे में बन्द करने से पहले वनस्पतियों को निम्न तापमान में संचित करना चाहिये, गरम करने की अवधि कम होनी चाहिये, पकाने के माध्यम के जल को फेंकना नहीं चाहिये, माध्यम को अम्लीय रखना चाहिये और डिब्बा बन्द करके उसको तुरन्त शीतल करना चाहिये। इससे विटामिन C के विनाश को काफी सीमा तक कम किया जा सकता है।

विटामिन P

स्कर्वीरोधी विटामिन C का अन्वेषण होने के बाद भी वैज्ञानिकों ने यह देखा कि स्कर्वी रोग के रक्तस्राव में केवल विटामिन C को देने से उतना स्पष्ट लाभ नहीं होता, जितना कि नींबू के रस को या विटामिन C से समृद्ध अन्य भोजन के पदार्थों को देने से होता है। इसका अर्थ था कि इन भोजनों में विटामिन C के अतिरिक्त अन्य कोई ऐसा पदार्थ भी है, जो स्कर्वी रोग का निरोध करता है। 1935 ईसवी में शेन्ट ज्योर्जी ने बताया कि लाल मिर्च और नींबू के रस में एक ऐसा पदार्थ और है, जो स्कर्वी रोग के रक्तस्राव को रोकता है। परन्तु यह पदार्थ रासायनिक रचना की दृष्टि से ऐस्कॉर्बिक अम्ल से भिन्न है। इस पदार्थ को हेस्पिरिडिन और विटामिन P नाम दिया गया। यद्यपि अनेक वैज्ञानिकों का यह मत रहा कि इस पदार्थ को विटामिन नाम देना ठीक नहीं है, तथापि इस पदार्थ को विटामिनों में गिन लिया गया है।

विटामिन P की खोज अन्य भोजन पदार्थों से भी की गई है। कूटू से प्राप्त प्राप्त रूटिन में और चेस्टनट से प्राप्त एस्क्यूलिन में भी विटामिन P की सक्रियता पाई गई है। हेस्पिरिडिन की अपेक्षा रूटिन में कई गुना विटामिन P की सक्रियता पाई गई।

विटामिन P की कमी के परीक्षण मनुष्यों में विशेष उपयोगी सिद्ध नहीं हुये। अधिकतर गिनीपिगों पर ही परीक्षण करके इस विटामिन के गुणों को निर्धारित किया गया है।

विटामिन P अनेक वनस्पतियों में पाया गया है। नींबू जाति के फलों में यह रस की अपेक्षा छिलके में अधिक होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

छठा अध्याय

विटामिनों और खनिजों की कमी से उत्पन्न होने वाले कुछ विशेष रोग

यद्यपि विटामिनों और खनिजों के वर्णनों में उनकी कमी से उत्पन्न होने वाले लक्षणों और रोगों का उल्लेख किया जा चुका है, तथापि इनका एक स्थान कुछ अधिक विस्तृत विवरण देना अधिक उपयोगी और ज्ञानवर्धक होगा।

विटामिन A की कमी के रोग—

विटामिन A की कमी मुख्य रूप से गरीब जनता को होती है, जिसको सन्तुलित पुष्टिकर भोजन मँहगे होने के कारण उपलब्ध नहीं हो पाता। दूध, फल, अण्डे हरी सब्जियाँ आदि जो कि इस विटामिन के समृद्ध स्रोत हैं, अन्य भोजनों की अपेक्षा मँहगे हैं तथा निर्धन व्यक्ति उन भोजनों को खरीद नहीं पाते तथा उनको यह विटामिन प्राप्त नहीं होता। जिन व्यक्तियों को इस विटामिन की कमी होती है, उनको भोजन के अन्य घटकों की भी कमी रहती है तथा उनको विटामिन D, प्रोटीन तथा पूरी कैलारियों वाला भोजन भी पूरी मात्रा में नहीं मिलता है। जिन देशों में निर्धनता अधिक है, उन देशों में— इन्डोनेशिया, मलाया, फिलिपाइन्स, वीटनाम, सीलौन, बर्मा, भारतवर्ष, पाकिस्तान आदि दक्षिणपूर्वी देशों में विटामिन A की कमी अधिक पाई जाती है। मध्य पूर्व के देशों, अफ्रीका और यूरोप के कुछ देशों में भी इस विटामिन की कमी से उत्पन्न रोगों का प्रसार है।

विटामिन A की कमी से उत्पन्न रोग बच्चों में, विशेष रूप से एक से पाँच वर्ष की आयु में अधिक होते हैं। केन्द्रीय जावा में किये गये एक सर्वेक्षण की रिपोर्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के अनुसार विटामिन A की कमी के 700 रोगियों में से 11 प्रतिशत रोगी एक वर्ष से कम आयु के और 80 प्रतिशत रोगी दो से पाँच वर्ष तक की आयु के थे।

विटामिन A की कमी का सबसे गम्भीर प्रभाव आँखों पर होता है। इससे उत्पन्न होने वाले प्रमुख रोग हैं— रतोंधी, शुष्क अक्षिपात और कैरेटोमेलेशिया।

रतौंधी रोग में धुंधले प्रकाश में अंधेरे में देखने की शक्ति कम हो जाती है। इसका कारण दृष्टिपटल में विटामिन A की कमी हो जाना है। छोटे बच्चे अपनी इस अवस्था का ठीक वर्णन नहीं कर सकते और उनमें इस रोग के लक्षण बढ़ते जाते हैं।

स्थिति के अधिक गम्भीर होने पर शुष्क अक्षिपात होता है। इस अवस्था में आँखों की झिल्लियाँ सूखने लगती हैं। स्वच्छमण्डल अपारदर्शी हो जाता है और उसमें झुर्रियाँ पड़ने लगती हैं। आखें लाल रहने लगती हैं। अब यहाँ मृत कोशिकायें एकत्रित होने लगती हैं।

अधिक गम्भीर होने पर यह अवस्था कैरेटोमेलेशिया में विकसित होती है। इस अवस्था में आँखों में घाव हो जाते हैं और अपसामान्य रचनायें बनने लगती हैं। इससे रोगी बिल्कुल अन्धा हो जाता है। संसार में अन्धत्व का एक सबसे बड़ा कारण कैरेटोमेलेशिया रोग है।

सबसे अधिक ध्यान देने की बात यह है कि इन विकारों के विकसित होने में रोगी को दर्द का अनुभव नहीं होता, जिससे उसके रोग का पता नहीं लगने पाता। यह रोग बढ़ता जाता है और अन्त में असाध्य हो जाता है। यदि प्रारम्भिक अवस्थाओं में ही रोग का निदान हो जावे और रोगी को विटामिन A की बड़ी सान्द्र मात्रायें दी जावें तो यह रोग सरलता से ठीक हो सकता है।

विटामिन A का दूसरा महत्वपूर्ण प्रभाव त्वचा पर है। इस विटामिन की कमी होने पर त्वचा सूखने लगती है, चटखने लगती है और इस पर झुर्रियाँ पड़ने लगती हैं। त्वचा का रंग उड़ने लगता है और हाइपरकैरेटोसिस नाम का विकार उत्पन्न होता है। इस रोग के होने पर बालों की चमक नष्ट हो जाती है और वे सूखे, पतले तथा बेडोल हो जाते हैं। बाल खड़े रहते और मोड़ने पर मुड़ते नहीं हैं। इसके बाद बाल उड़ने लगते हैं। नाखूनों में चटखनें तथा दरारें बन जाती हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन A की कमी का प्रभाव शरीर की वृद्धि, विकास, शरीर के स्वस्थ बने रहने और जीवाणुओं के संक्रमण का निरोध करने की क्षमता पर भी पड़ता है। शरीर का पोषण ठीक प्रकार से नहीं होता। विकास में रुकावट होती है। अनेक प्रकार के रोगों के संक्रमण हो सकते हैं। इन अवस्थाओं में अतिसार या संग्रहणी प्रायः बनी रहती है। अतिसार की यह अवस्था और भी हानिप्रद होती है, क्योंकि इस अवस्था में जो विटामिन शरीर को प्राप्त भी होती है, उसका भी अवशोषण नहीं हो पाता।

विटामिन A की कमी सामान्यतः भोजन की अपूर्णता से होती है, जिसका प्रभाव निर्धन वर्ग में अधिक देखा गया है। यह प्रभाव भी बच्चों में अधिक होता है। बच्चों का ठीक प्रकार से पोषण नहीं होता और उनमें आँखों के विकार उत्पन्न होते हैं। इस अवस्था में विटामिन A की कमी को पूरा करने पर भी ये प्रभाव अपने दुष्परिणामों को छोड़ जाते हैं। इन बच्चों की दृष्टि सदा के लिये कमजोर हो जाती है या वे अन्धे हो जाते हैं।

विटामिन D की कमी के रोग

विटामिन D का प्रमुख कार्य भोजन के कैल्सियम और फॉस्फोरस का पाचन तन्त्र द्वारा अवशोषण करके इनको अस्थियों में निक्षिप्त करना है। इस विटामिन की कमी भी प्रायः निर्धन वर्ग में देखी गई है। विटामिन D युक्त भोजन के न मिलने से और उचित मात्रा में धूप के प्राप्त न होने से शरीर में इस विटामिन की कमी होती है। इस विटामिन के न मिलने पर पाचन तन्त्र द्वारा कैल्सियम और फॉस्फोरस का अवशोषण बाधित होता है और अस्थियों में इनका निक्षेप नहीं हो पाता। ये मृदु हो जाती हैं और शरीर के भार से विरूप तथा टेढ़ी हो जाती हैं। विटामिन D की इस कमी से मुख्य रूप से दो रोग उत्पन्न होते हैं—

सूखा रोग—

सूखा रोग बच्चों का रोग है। यह रोग अधिकतर उन गरीब मनुष्यों के बच्चों को, जो कि प्रायः धूप से रहित स्थानों में रहते हैं और उचित पोषक भोजन प्राप्त नहीं कर सकते, आक्रान्त करता है। इन व्यक्तियों के भोजन में एक तो वैसे ही कैल्सियम और फॉस्फोरस की कमी होती है और जो कुछ भी ये खनिज उनको भोजन में प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होते हैं, विटामिन D की कमी के कारण उनका भी ठीक प्रकार से अवशोषण नहीं होता और वे अस्थियों तक नहीं पहुँच पाते ।

इन बच्चों की अस्थियों में कैल्सीभवन (अस्थियों में कैल्सिमम का निक्षेपण) दोषपूर्ण होता है । ये अस्थियाँ कठोर नहीं हो पातीं और दबाव पड़ने पर या शरीर के ही भार से मुड़ कर विरूप हो जाती हैं ।

सूखा रोग से पीडित बच्चों की अस्थियों में अस्थि कल्प नाम का पदार्थ बनता है । इसके बढ़ जाने से सन्धियाँ उभर आती हैं और पर्शुकाओं (वक्ष की अस्थियी) के जोड़ों पर दाने उभत आते हैं । कपाल की अस्थियाँ भी उभर आती हैं । इस कारण कपाल पर जो उभार उत्पन्न होने हैं, उनको 'रिकेटी रोजरी' नाम दिया गया है ।

सूखा रोग से पीड़ित बच्चों के दान्त या तो निकलते ही नहीं और यदि निकलते भी हैं तो देर से निकलते हैं । ये दान्त पतले होते हैं तथा इनमें इनेमल (दान्त के ऊपर का कठोर आवरण) कम होता है । दान्तों में दरारें और गढे हो सकते हैं । इन दान्तों में जीवाणुओं का संक्रमण बहुत शीघ्र हो जाता है और ये फिर गिर कर गलने लगते हैं ।

सूखा रोग से पीडित बच्चों की पेशियों में शक्ति और लचक नहीं रहती और ये शिथिल रहती हैं । इनका पेट उभर आता है । रोग के अत्यधिक बढ़ जाने पर इन रोगियों में विशेष प्रकार के आक्षेप होते हैं, जिनको टिटैनी कहते हैं ।

विटामिन D की कमी के साथ-साथ प्रायः विटामिन A और भोजन के अन्य घटकों की भी कमी होती है । इन रोगियों को प्रायः अतिसार रहता है तथा विविध प्रकार के रोगों के संक्रमण की आशंका रहती है ।

अस्थिमृदुता—

अस्थिमृदुता रोग वयस्कों को होता है और यह बच्चों के सूखा रोग के समान है । यह रोग प्रायः स्त्रियों को होता है । भारतवर्ष में सामाजिक कारणों से और निर्धनता के कारण स्त्रियों को पोषक भोजन और दूध उचित मात्रा में नहीं मिल पाते । यह देखा गया है कि जित स्त्रियों को गर्भ धारण अनेक बार होता है, उनमें यह रोग अधिक होता है । गर्भ में स्थित भ्रूण इन स्त्रियों के अस्थियों के कैल्सियम और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फॉस्फोरस का उपयोग करता है, जिससे उनकी अस्थियों में इन खनिजों की मात्रा कम हो जाती है और वे मृदु तथा निर्बल हो जाती है।

सूखा रोग और अस्थिमृदुता में विटामिन D में समृद्ध किये गये भोजनों को देना चाहिये। ओषधि के रूप में विटामिन D की बड़ी मात्रायें देनी चाहियें और कैल्सियम तथा भॉस्फोरस के यौगिक देने चाहियें। इन रोगों में धूप का सेवन करना बहुत अधिक लाभदायक होता है।

विटामिन B संश्रिम की कमी के रोग

विटामिन B संमिश्र वर्ग में 11 विटामिनें हैं। प्रत्येक विटामिन की कमी से विशेष प्रकार के रोग उत्पन्न हो सकते हैं। इन विटामिनों में तीन विटामिनें प्रमुख हैं, जिनके कमी के लक्षण अधिक होते हैं। ये विटामिनें हैं— विटामिन B_1 (थायामिन), विटामिन B_2 (रिबोफ्लेविन), और नियासिन। इन विटामिनों की कमी से मुख्य रूप से क्रमशः बेरी-बेरी, रिवोफ्लेविन-हीनता और पैलाग्रा रोग उत्पन्न होते हैं। इनका संक्षिप्त वर्णन नीचे किया जा रहा है—

बेरी-बेरी—

बेरी-बेरी रोग विटामिन B_1 (थायामिन) की कमी के कारण उत्पन्न होता है। जिन देशों का मुख्य आहार चावल है, जैसे— चीन, जापान, वीटनाम, स्याम, बर्मा, फिलिपाइन्स, लंका आदि, उन देशों में इस रोग का प्रसार अधिक रहा है। यह रोग उन क्षेत्रों में अधिक देखा गया, जहाँ चावल की मिलें लग गईं और वहाँ के व्यक्ति हाथ के कुटे चावल को छोड़कर मिल का छिलका उतरा चावल खाने लगे। मिलों में धान से चावल अलग करने पर चावल के ऊपर का आवरण भी उतर जाता है। इस आवरण के स्तर में ही चावलों में विद्यमान विटानिन B_1 रहता है। अब यह विटामिन भोजन करने वाले को प्राप्त नहीं होता और वह बेरी-बेरी रोग से आक्रान्त होता है।

शरीर में कार्बोहाइड्रेटों के पाचन और उपापचय के लिये विटामिन B_1 कार्य करता है। अतः जो व्यक्ति अधिक कार्बोहाइड्रेट युक्त भोजन करते हैं, उनको अधिक विटामिन B_1 की आवश्यकता होती है। चावलों में मुख्य अंश कार्बोहाइड्रेट का है और उनके पाचन के लिये वैसे ही विटामिन B_1 अधिक चाहिये। दूसरी ओर मिल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का कुटा चावल खाने वाले को चावल में स्थित भी यह विटामिन नहीं मिल पाता। चावल के ऊपरी स्तर के निकल जाने से यह विटामिन निकल गया था। इस कारण मुख्य रूप से चावलों का ही आहार करने वाले को बेरी-बेरी का आक्रमण शीघ्र हो जाता है।

यह रोग निर्धन व्यक्तियों में ही अधिक देखा गया है। निर्धन व्यक्तियों को मिल का कुटा चावल ही भोजन में प्राप्त हो पाता है, वे अन्य पदार्थ खाने के लिये प्राप्त करने में असमर्थ रहते हैं। सम्पन्न व्यक्ति चावलों के साथ अन्य इतने भोजन के पदार्थ ले लेते हैं कि उनकी विटामिन की आवश्यकतायें भोजन के अन्य स्रोतों से पूरी हो जाती हैं।

अनेक मिलों में धान का छिलका उतार कर चावलों पर पालिश भी की जाती है। धान से चावलों को अलग करने में चावल का ऊपर का स्तर उतर जाने से अधिकांश विटामिन B_1 तो पहले ही निकल गया था, अब बचा हुआ विटामिन B_1 भी चावल की पालिश करने से नष्ट हो जाता है। यह देखा गया है कि जिन क्षेत्रों में चावल की मिलें लगाई गईं और वहाँ की जनता ने हाथ का कुटा चावल खाना बन्द कर दिया, उन क्षेत्रों में बेरी-बेरी रोग का अधिक प्रसार हुआ। थाइलैण्ड के दो प्रदेशों में बेरी-बेरी रोग के लिये सर्वेक्षण किया गया। इससे विदित हुआ कि जिन क्षेत्रों में चावल की मिलें लग गईं थीं, वहाँ गर्भवती और दूध पिलाने वाली माताओं में बेरी-बेरी रोग का प्रसार दूसरे क्षेत्रों की अपेक्षा दुगना हुआ था।

चावलों को पकाने के तरीके का भी इस रोग से घनिष्ठ सम्बन्ध है। भारतवर्ष के अनेक क्षेत्रों में यह रिवाज है कि चावलों को अधिक पानी में पकाया जाता है तथा चावलों के पक जाने पर उस अधिक पानी को मांड के रूप में फैंक दिया जाता है। विटामिन B_1 जलविलेय विटामिन है। चावलों को पकाने पर यह पानी में घुल जाती है और मांड को फैंक देने के साथ वह भी फैंक दी जाती है। पकाने से पहले चावलों को अधिक धोने से भी यह नष्ट होती है।

बेरी-बेरी रोग सभी वर्ग के व्यक्तियों में— बच्चों में, वयस्कों में और स्त्रियाँ एवं पुरुषों में हो सकता है। बच्चों में यह रोग इसलिये उत्पन्न होता है, क्योंकि उनकी माताओं के दूध में इस विटामिन की कमी होती है। दूध पीने वाले बच्चों में इस रोग का आक्रमण सहसा और तीव्र हो सकता है तथा उस बच्चे की 24 घण्टे से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

48 घण्टों में मृत्यु हो सकती है। प्रायः किसी प्रकार की चिकित्सा सहायता मिलने से पहले ही बच्चा मर जाता है।

बच्चों के इस रोग का मुख्य कारण माता के दूध में पाइरूविक अम्ल जैसे विषाक्त पदार्थ का बन जाना है। माता के शरीर में विटामिन B_1 की कमी के कारण कार्बोहाइड्रेटों का पूरा पाचन नहीं होता, जिससे पाइरूविक अम्ल जैसे विषैले पदार्थ उसके रक्त में रहते हैं। ये पदार्थ दूध में भी आ जाते हैं और उस दूध को पीने से उस बच्चे की मृत्यु हो जाती है। दक्षिणपूर्वी देशों में और अन्य चावल भोजी देशों में बाल मृत्यु की अधिकता का यह बहुत बड़ा कारण है।

वयस्कों में यह रोग किसी भी आयु में हो सकता है। परन्तु यह रोग गर्भवती और दूध पिलाने वाली स्त्रियों को अधिक होता है, क्योंकि उनको इस विटामिन की पूर्ति अपने शरीर के साथ ही बच्चे के शरीर के लिये भी करनी होती है। वयस्कों में बेरी-बेरी रोग दो प्रकार का हो सकता है।

(1) सूखा

(2) आर्द्र

सूखे प्रकार के बेरी-बेरी में तन्त्रिकायें अधिक प्रभावित होती हैं। इससे पेशियों की अपुष्टि और क्षय होकर विभिन्न प्रकार के अंगघात (लकवा) हो सकते हैं। इसके बाद हाथ और पैर सूखने लगते हैं और उनकी संवेदनशीलता कम होती जाती है।

आर्द्र प्रकार के बेरी-बेरी रोग में हृदय पर अधिक प्रभाव पड़ता है। इसमें विशेष रूप से हृदय का दायां निलय बढ़ जाता है तथा सारे शरीर में शोफ हो जाता है। यह शोफ हाथों और पैरों से प्रारम्भ होकर धीरे-धीरे सारे शरीर में बढ़ता जाता है। दोनों ही प्रकारों के बेरी-बेरी रोग में अरुचि और अतिसार हो सकते हैं। दोनों प्रकारों में मिले-जुले लक्षण भी हो सकते हैं।

बेरी-बेरी रोग के निरोध और चिकित्सा का सबसे उत्तम उपाय विटामिन B_1 को पूरी मात्रा में लेना है। सबसे पहले टाकाकी नामक जापानी वैज्ञानिक ने भोजनों में यथोचित सुधार करके जापानी नौसैनिकों में फैलने वाले इस रोग का निरोध और इसकी चिकित्सा की थी। उसके द्वारा किये गये उपाय से उन सैनिकों को विटामिन, B_1 भोजन में पर्याप्त मात्रा में मिलने लगा। चावल खाने वालों को यह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन विशेष रूप से अधिक मिलना चाहिये तथा प्रकृति ने इस आवश्यकता को चावलों में इस विटामिन को पर्याप्त निहित करके पूरा किया है।

घर का कुटा चावल विटामिन B_1 की आवश्यकता को पूरा करने में समर्थ है। परन्तु वर्तमान युग की सभ्यता में, जबकि चावल का उत्पादन बहुत बड़ी मात्रा में किया जाता है, प्रत्येक व्यक्ति के लिये घर का कुटा चावल उपलब्ध कराना सम्भव नहीं है। इसके लिये यह उपाय किया जा सकता है कि मिलों में चावल की कुटाई होने से पहले धान को वाष्पित करा लिया जाय। वाष्पित कराने से चावल के ऊपरी स्तर में विद्यमान विटामिन B_1 पूरे चावल में फैल जाती है। अब कुटाई में चावल के ऊपरी स्तर के निकल जाने पर भी उसमें अधिकांश विटामिन B_1 बची रह जाती है। वाष्पित चावल को घर में कुटवाने पर और भी अधिक विटामिन B_1 प्राप्त होता है। चावलों को पकाते समय और भी अधिक सावधानी बरतने से इस विटामिन को नष्ट होने से बचाया जा सकता है। पकाने में पानी अधिक नहीं डालना चाहिये और मांड नहीं निकालना चाहिये।

बेरी-बेरी रोग के लक्षणों के प्रकट होने पर विटामिन B_1 को औषधि के रूप में बड़ी मात्राओं में देना चाहिये। इस अवस्था में अकेली विटामिन B_1 देने की अपेक्षा विटामिन B संमिश्र को देना अधिक लाभदायक होता है, क्योंकि इस अवस्था में अन्य विटामिनों की भी कमी की सम्भावना रहती है।

रिबोफ्लेविन-हीनता—

रिबोफ्लेविन (विटामिन B_2) की कमी से उत्पन्न होने वाले लक्षणों को रिबोफ्लेविन-हीनता नाम दिया गया है। मिलों के कुटे-पिसे अनाज पर निर्भर रहने वाले व्यक्तियों को, जिन्हें ताजे फल, हरी वनस्पतियाँ और दूध पर्याप्त मात्रा में प्राप्त नहीं होते, यह रोग अधिक होता है। भारतवर्ष में निर्धन वर्ग के बच्चों और वयस्कों में इस रोग की अधिक घटनायें देखी जाती हैं।

रिबोफ्लेविन की कमी होने पर शरीर के कुछ विशेष भागों की त्वचा और श्लैष्मिक कला में परिवर्तन होते हैं। ये परिवर्तन मुख, होठ, जीभ, नाक और अण्ड-कोश पर अधिक प्रकट होते हैं। मुख और गले में सूजन होती है तथा वहाँ छाले पड़ जाते हैं। नाक और कानों के पीछे तथा अण्डकोश की त्वचा में, सूजन, छाले और चटखनें पड़ जाती हैं। इनसे पानी भी बहता है। मुख के कोनों और जीभ पर चटखनें पड़ती हैं। ये घाव बहुत कठिनाई से और धीरे-धीरे ठीक होते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आँखों की रक्तवाहिनियां बड़ी हो जाती हैं। प्रारम्भ में आँखों में लाल डोरे दिखाई देते हैं और बाद में वे सम्पूर्ण रूप से सूजी हुई तथा लाल हो जाती हैं। ये प्रकाश की प्रति संवेदी हो जाती हैं तथा प्रकाशभीति होती है।

पैलाग्रा—

पैलाग्रा रोग विटामिन B संमिश्र वर्ग की ही एक विटामिन नियासिन की कमी के कारण होता है। जिन भोजनों में इसकी न्यूनता है, उस भोजन पर निर्भर रहने वाले व्यक्तियों में इस रोग का प्रसार अधिक देखा गया है। यह देखा गया है कि जिन देशों में और स्थानों पर मक्का को मुख्य भोजन के रूप में लिया जाता है, वहाँ इसका प्रसार अधिक है। केन्द्रीय अमेरिका और अफ्रीका में इस रोग का प्रसार अधिक देखा गया है। भारतवर्ष में यद्यपि इस रोग का प्रसार कम है, तथापि ज्वार और चौलम को खाने वाले प्रदेशों में, दक्षिण भारत में कुछ व्यक्तियों में पेलाग्रा रोग का प्रसार पाया गया है। गुजरात और राजस्थान में भी इस रोग की कुछ घटनायें देखी गई हैं।

मक्का का पैलाग्रा रोग से विशेष सम्बन्ध देखा गया है। जिन प्रदेशों में मक्का को मुख्य भोजन के रूप में लिया जाता है, उन प्रदेशों में इस रोग का अधिक प्रसार रहा है। इसका कारण यह है कि एक तो मक्का में नियासिन अत्यल्प होता है और दूसरे उसमें एक नियासिन रोधी पदार्थ भी है, जो शरीर में नियासिन के लिये विरोधी कार्य करता है।

नियासिन का ट्रिप्टोफेन नामक प्रोटीन से भी विशेष सम्बन्ध है। यह एक विशेष प्रकार का प्रोटीन है, जो शरीर में जाकर नियासिन में परिणत हो जाता है। अतः भोजन में यदि ट्रिप्टोफेन की कमी है तो नियासिन की भी कमी हो जाती है। ट्रिप्टोफेन से युक्त भोजन लेने पर नियासिन से युक्त भोजन की आवश्यकता कम हो जाती है।

पैलाग्रा रोग का प्रसार निर्धन व्यक्तियों में, जिनको उचित प्रकार का पोषक भोजन पूरी तौर पर नहीं मिल पाता, देखा गया है। इस रोग के होने पर सबसे पहले त्वचा पर प्रभाव पड़ता है। त्वचा में शोथ हो जाती है और वह लाल हो जाती है। उसमें खुजली और छाले हो जाते हैं। तथा चटखनें पड़ सकती हैं। ये प्रभाव उस स्थान की त्वचा पर अधिक होते हैं, जहाँ कि सूर्य की धूप अधिक लगती है। ग्रामीण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

क्षेत्रों में उन दिनों में जबकि मक्का अधिक खाई जाती है, ये लक्षण अधिक देखे गये हैं।

नियासिन की कमी की अधिक उग्रता होने पर पाचन तन्त्र पर प्रभाव पड़ता है। अतिसार हो जाता है। मुख में छाले हो जाते है और जीभ पर व्रण होते हैं। आन्त्र में शोथ होती है। बाद में यकृत भी प्रभावित होता है। तन्त्रिकाओं को प्रभावित करने वाले भी लक्षण उत्पन्न होते हैं। सिर में वेदना, चक्कर आना, अनिद्रा, स्मरण शक्ति की कमी हो जाना, उत्तेजनशीलता, चिन्ता, मानसिक अवसाद आदि लक्षण उत्पन्न होते हैं।

पैलाग्रा रोग की चिकित्सा के लिये नियासिन को समुचित मात्रा में शरीर में पहुँचाना चाहिये। लोगों को नियासिन से युक्त और ट्रिप्टोफेन से समृद्ध भोजन मिलना चाहिये। भोजन में अनाजों और दालों को मिश्रित रूप से देने से इस विटामिन की कुछ अंश तक पूर्ति हो जाती है। मूंगफली नियासिन का बहुत अच्छा स्रोत है, जो भारतवर्ष में सभी के लिये सुलभ है।

पैलाग्रा रोग के हो जाने पर नियासिन को ओषधि के रूप में बड़ी मात्राओं में दिया जाता है। परन्तु इस अवस्था में अकेले नियासिन को देने की अपेक्षा विटामिन B संमिश्र को देना अधिक उपयोगी है।

विटामिन C की कमी के रोग

शरीर के पोषण के लिये विटामिन C का बहुत अधिक महत्त्व है। शरीर में संयोजी अवयवों को स्थिर रखने के लिये और उनमें सिमेन्टम की रचना के लिये, अस्थियों को कठोर बनाने के लिये, टूटी अस्थियों को जोड़ने के लिये, घावों को भरने के लिये, विभिन्न भागों की वाहिनियों की दीवारों की रचना को स्वस्थ बनाये रखने के लिये और संक्रमण के प्रति निरोधक शक्ति उत्पन्न करने के लिये शरीर को अनिवार्य रूप से विटामिन C मिलना चाहिये।

विटामिन C की कमी से उत्पन्न होने वाला प्रमुख रोग स्कर्वी है। यह रोग उन व्यक्तियों को अधिक होता है, जिन्हें ताजे फल, सब्जी आदि पदार्थ भोजन में नहीं मिलते और जिनको लम्बे समय तक ताजे खाद्य पदार्थों से वंचित रहना पड़ता है। पहले समय में नाविकों को, जो महीनों तक पृथिवी से दूर रहते थे तथा जहाजों में संचित खाद्य पदार्थों का ही उपयोग करते थे, स्कर्वी रोग बहुत होता था। उनके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन में नीबू को सम्मिलित कर देने से इसका आश्चर्यजनक प्रभाव हुआ और उनमें इस रोग का प्रसार प्रायः रुक गया। बाद में अन्वेषणों से विदित हुआ कि नीबुओं में विटामिन C प्रचुर परिमाण में विद्यमान है। इसके बाद अन्वेषकों ने खोज की कि यह विटामिन स्कर्वी रोग का निरोध करता है और इसकी कमी होने पर यह रोग उत्पन्न होता है।

स्कर्वी—

स्कर्वी रोग के हल्के लक्षण तो अनेक व्यक्तियों में देखने में आ जाते हैं, परन्तु स्पष्ट या तीव्र लक्षण बहुत कम देखने में आते हैं। भोजनों में सुधार हो जाने से इस रोग का प्रसार बहुत कम हो गया है।

स्कर्वी रोग की गम्भीर अवस्था होने पर विभिन्न अंगों में रक्तस्राव होता है। धमनियों और केशिकाओं की दीवारों के कमजोर हो जाने से उनमें रक्त स्रवित होने लगता है। त्वचा से और श्लेष्मिक कला से रक्त का स्राव होता है। आन्तरिक अंगों में, सन्धियों में और अस्थियों के आवरण में रक्त स्राव होता है। मसूढे सूज जाते हैं, स्पंजी हो जाते हैं और उनमें रक्त का स्राव हो सकता है। दान्त ढीले हो जाते हैं और उनकी जड़ों में व्रण हो सकते हैं। सन्धियाँ कठोर हो जाती हैं और उसमें शोथ तथा वेदना होती है। अरक्तता होती है। श्वास लेने में कठिनाई होती है। सारे शरीर पर शोफ हो सकती है। उत्तेजनशीलता, चिड़चिड़ापन और कार्य करने के प्रति उदासीनता हो जाती है। शरीर में निर्बलता तथा थकावट रहती है।

बच्चों में स्कर्वी रोग के लक्षण वयस्कों की अपेक्षा कुछ भिन्न होते हैं। लक्षणों के प्रारम्भ होने से कुछ समय तक बच्चा सुस्त और उदासीन रहता है तथा उसको भूख नहीं लगती। रोग के प्रारम्भ होनेपर वह अपनी टांगों को ऊपर पेट की ओर सिकोड़ लेता है। छूने पर और हाथ-पैरों को हिलाने पर वह चीखता है। अस्थियों के आवरण में रक्त स्राव होने से उसकी लम्बी अस्थियों के सिरों पर सूजन हो जाती है तथा वहाँ स्पर्श करने पर वेदना होती है। छाती अन्दर को धंस जाती है और पर्शुकाओं के जोड़ों पर उभार बन जाते हैं। त्वचा पर लाल दाने बन जाते हैं (पर्पुरा)। थोड़ा सा भी आघात हो जाने पर बहुत अधिक रक्तस्राव होता है। दान्त यदि निकलते हैं तो उनके चारों ओर लाल-नीले रंग की सूजन होती है। मूत्र और विष्ठा में रक्त आ सकता है। उचित समय में ही यदि चिकित्सा न हो तो सांस रुकने लगता है तथा आक्षेप होकर मृत्यु हो जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्कर्वी रोग से बचने के लिये तथा विटामिन C की कमी से छः उत्पन्न अन्य लक्षणों के निरोध के लिये ऐसे भोजनों का प्रबन्ध होना चाहिये, जिनमें विटामिन C की प्रचुर मात्रा हो। मनुष्य को इस विटामिन की आवश्यकता पूरी होती रहनी चाहिये। नीबू जाति के फलों में—नीबू, सन्तरा, मौसम्मी आदि में विटामिन C प्रचुर होता है। आंवला इस विटामिन का सबसे समृद्ध स्रोत है। अंगूर, पपीता, आम और टमाटर में भी यह विटामिन पर्याप्त होता है। अनेक ताजी सब्जियाँ इस विटामिन की अच्छी स्रोत हैं। विटामिन C की तालिका में अनेक भोजनों के विटामिन अंश दिये गये हैं। दूध, अण्डों और मांस में यह विटामिन बहुत कम है।

विटामिन C बहुत नाजुक होती है तथा थोड़े से भी उपचार से यह नष्ट होने लगती है। यह अधिक गर्मी को सहन नहीं कर सकती। इसलिये भोजनों को अधिक पकाने से यह विटामिन नष्ट हो जाती है। भोजन को बासी करने से भी यह नष्ट होती है। इसलिये भोजन को और फलों को यथासम्भव ताजा ही लेना चाहिये। यह विटामिन जलविलेय है, इसलिये भोजन के पदार्थों को अधिक जल में पका कर उस जल को फेंक देना इस विटामिन को फेंक देना है।

विटामिन C का प्रयोगशालाओं में संश्लेषण किया जा चुका है। संश्लेषण ने इसकी कमी को बहुत कुछ पूरा कर दिया है। बाजार में इस विटामिन की उच्च शक्ति वाले अनेक प्रकल्पन स्वतन्त्र रूप में या अन्य विटामिनों और खनिजों के साथ मिलते हैं। विटामिन C की कमी होने पर और इस कमी से उत्पन्न लक्षणों के प्रकट होने पर इन प्रकल्नों को उचित मात्रा में दिया जा सकता है।

अरक्तता

अरक्तता रोग का प्रसार उष्ण और समशीतोष्ण देशों में अधिक है। अनेक अविकसित और अर्धविकसित देशों में इस रोग का प्रसार जनसामान्य के स्वास्थ्य के लिये एक समस्या है। इस रोग का मुख्य कारण पोषक भोजन की समुचित व्यवस्था का न होना है। यद्यपि अरक्तता किसी भी अवस्था और आयु में हो सकती है, तथापि यह रोग गर्भवती स्त्रियों, दूध पिलाने वाली माताओं, शिशुओं और छोटी आयु के बालकों को अधिक होता है।

अरक्तता रोग कई कारणों से हो सकता है। इनमें एक प्रमुख कारण शरीर को लोह की आवश्यकता का पूरा न होना है। इस प्रकार की अरक्तता को पोषणात्मक अरक्तता या लोहहीनताजन्य अरक्तता कहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भोजन में लोह तत्त्व की कमी के कारण पोषणात्मक अरक्तता हो सकती है। परन्तु अनेक अवस्थायें ऐसी भी हो सकती हैं, जबकि भोजन में लोह की पर्याप्त मात्रा होने पर भी यह अरक्तता हो जाये। जिन स्त्रियों की बार-बार गर्भ रह जाता है या अत्यधिक रज: स्राव (अत्यार्तव) होता है, उनके रक्त के बहुत अधिक निकल जाने के कारणउनके शरीर में लोह की कमी हो जाती हैं। पेट में कीड़े हो जाने पर लोह का पूरा अवशोषण नहीं होता और अरक्तता हो सकती है। भारतवर्ष में और विशेष करके इस देश के गाँवों में इस प्रकार की अरक्तता बहुत अधिक है। पेट के कीड़ों की बीमारी देश में एक समस्या है, जो राष्ट्रीय स्तर पर हल की जानी चाहिये। यदि पेट में कीड़ें हों और भोजन में लोह की कमी हो तो यह समस्या और भी अधिक गम्भीर हो जाती है।

भारतवर्ष में अरक्तता का मुख्य कारण आन्त्र द्वारा लोह का कम अवशोषण और शरीर द्वारा इसका अधिक उत्सर्जन है। इसके कुछ कारण तो ऊपर कहे जा चुके हैं, उनके अतिरिक्त और भी अनेक कारण हो सकते हैं। भारतीयों के भोजन में कार्बोहाइड्रेटों की मात्रा अधिक रहती है, जो लोह से अवशोषण को रोकती है। अनाजों में विद्यमान फॉस्फेटों और फाइटेटों की अधिक मात्रा भी लोह के अवशोषण का निरोध करती है। के पदार्थ लोह के साथ मिल कर लोह के अघुलनशील यौगिक बनाते हैं।

भारतीयों के भोजन में प्रोटीन और विटामिन C की कमी रहती है। ये पदार्थ लोह के अवशोषण में सहायता करते हैं। इन पदार्थों के अपेक्षाकृत मंहगा होने के कारण ये सर्वसाधारण को अधिक सुलभ नहीं हैं।

पसीने के द्वारा लोह का अंश शरीर से बाहर निकलता है। गरम देशों में पसीना अधिक आने के कारण लोह का अंश शरीर से अधिक बाहर आ जाता है। यदि भोजन के लोह द्वारा इसकी क्षतिपूर्ति न हो तो अरक्तता रोग हो सकता है।

रुधिर में हीमोग्लोबिन की मात्रा यह बताती है कि शरीर को लोह कितनी मात्रा में प्राप्य है। अरक्तता रोग होने पर रुधिर में हीमोग्लोबिन की प्रतिशतकता कम हो जाती है। सामान्यत: शिशुओं के रक्त में 10·8 प्रतिशत, बालकों के रक्त में 11·5 प्रतिशत, और किशोरों के रक्त में 12·5 प्रतिशत हिमोग्लोबिन रहता है। वयस्क पुरुषों के रक्त में 14 प्रतिशत और वयस्क स्त्रियों के रक्त में 12 प्रतिशत हीमोग्लोबिन रहना चाहिये। गर्भवती स्त्रियों के रक्त में इसकी प्रतिशतकता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

10 प्रतिशत तक रह जाती है। इससे कम हीमोग्लोबिन की प्रतिशतकता होने पर अरक्तता समझनी चाहिये। भारतवर्ष में कम से कम 14 प्रतिशत व्यक्ति ऐसे हैं, जो उग्र अरक्तता से पीड़ित हैं। इनके रक्त में 8 प्रतिशत से कम हीमोग्लोबिन है। इसके अतिरिक्त भारतवर्ष की लगभग आधी जनता ऐसी है, जिसके रक्त में हीमोग्लोबिन की प्रतिशतकता सामान्य औसत से कम है।

इस देश में अरक्तता का निदान और चिकित्सा राष्ट्रीय स्तर पर होनी चाहिये। इसके लिये समुचित शिक्षा, भोजन की आदतों में सुधार, भोजन के पदार्थों में हरी सब्जियों और दालों का पर्याप्त मात्रा में होना आवश्यक है। स्वच्छ जल की पूर्ति होना भी नितान्त आवश्यक है, जिससे पेट में कीड़ न जा सकें। आदतों को स्वच्छ रखने के लिये जनता को प्रशिक्षित किया जाना चाहिये।

रक्त में लोह की न्यूनता हो जाने पर लोहे के यौगिको को, जैसे फेरस सल्फेट को विटामिन C के साथ देना चाहिये। आयुर्वेद के लोह भस्म के यौगिक इस प्रयोजन के लिये बहुत गुणकारी हैं।

गलगण्ड

विश्व के अनेक भागों में गलगण्ड रोग बहुत व्यापक रूप से फैला हुआ है। अनेक क्षेत्रों को गलगण्ड क्षेत्रों के रूप में जाना जाता है और वहाँ के निवासियों को यह रोग बहुत अधिक आक्रान्त करता है। भारतवर्ष में हिमालय और उसकी तराइयों के प्रदेशों में इस रोग का प्रसार बहुत अधिक है।

आयोडीन का इस गलगण्ड रोग के साथ निश्चित सम्बन्ध है। शरीर में आयोडीन की कमी हो जाने पर इस रोग का आक्रमण होता है। हिमालय के क्षेत्रों में इस रोग का कारण यह बताया जाता है कि भारी वर्षा के कारण यहाँ की भूमि का आयोडीन अंश घुल कर बह जाता है। इस कारण क्षेत्र की भूमि में आयोडीन अंश कम रह जाता है और इससे यहाँ के जल और वनस्पतियों में आयोडीन की कमी रहती है। इस जल को पीने से और यहाँ उत्पन्न हुये भोजनों को खाने से यहाँ निवासियों को आहार में आयोडीन पूरी मात्रा में नहीं मिलता।

आयोडीन की कमी के कारण गलगण्ड रोग क्यों होता है, इस बात को पहले बतलाया जा चुका है। शरीर की क्रियाओं के संचालन के लिये अवटु ग्रन्थि एक हॉर्मोन, थाइरॉक्सिन का उत्पादन करती है। यह थाइरॉक्सिन नाम का हॉर्मोन टाइरोसिन नामक एमिनो अम्ल और आयोडीन के संयोजन से बनता है। आयोडीन की कमी हो जाने पर अवटु ग्रन्थि की कोशिकायें क्षतिपूर्ति का प्रयत्न करती हैं और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस कारण इनकी संख्या बढ़ती जाती है। इस प्रकार अवटु ग्रन्थि का आकार बड़ा होता जाता है और गलगण्ड रोग उत्पन्न होता है।

कुछ कारण और भी हैं, जो शरीर में आयोडीन की कमी करके गलगण्ड रोग को उत्पन्न करते हैं। स्वास्थ्य की दृष्टि से उनको जानना भी आवश्यक है। भोजनों में कुछ यौगिक ऐसे हो सकते हैं, जो भोजनों में आयोडीन के होने पर भी उसके अवशोषण का विरोध कर सकते हैं तथा आयोडीन की कमी उत्पन्न करते हैं। पत्तागोभी, राई के पत्ते, सरसों के पत्ते आदि वनस्पतियों में इस प्रकार के रासायनिक पदार्थ विद्यमान रहते हैं, जो शरीर में आयोडीन के अवशोषण का निरोध करते हैं। ऐसे भोजनों को गलगण्ड उत्पादक भोजन कहते हैं। भोजन में आयोडीन की कमी न होने पर भी इस प्रकार के भोजन शरीर में आयोडीन की कमी उत्पन्न करते हैं।

यह समझा जाता है कि कठोर जल का सेवन और रोगों का संक्रमण भी गलगण्ड रोगों को उत्पन्न करने में सहायक हो सकते हैं।

गलगण्ड रोग की उत्पत्ति का कोई भी कारण क्यों न हो, आयोडीन का प्रयोग इस रोग में लाभदायक होता है। इस रोग के निवारण के लिये विश्व भर में प्रयत्न किये जा रहे हैं तथा इस प्रयोजन के लिये आयोडीन बहुत उपयोगी सिद्ध हुआ है। अनेक देशों में जनता को भोजन के लिये आयोडिनीकृत नमक दिया जा रहा है। भारतवर्ष में भी विश्व स्वास्थ्य संगठन की सहायता से राष्ट्रीय गलगण्ड योजना कार्य कर रही है। अब इस रोग के उन्मूलन के लिये अखिल भारतीय आधार पर प्रयत्न किये जा रहे हैं।

मनुष्य में आयोडीन की कमी का और इससे उत्पन्न गलगण्ड रोग का कोई भी कारण क्यों न हो, यदि उसको प्रतिदिन आयोडीन की समुचित मात्रा मिल जावे, तो वह इस रोग से पीड़ित नहीं होगा। इस विचार के आधार पर यह प्रोग्राम बनाया गया है कि खाने वाले नमक को आयोडिनीकृत कर दिया जावे। प्रत्येक मनुष्य प्रतिदिन भोजन में नमक के कुछ न कुछ अंश का उपयोग अवश्य करता है। यदि वह आयोडिनीकृत नमक का प्रयोग करेगा तो उसको आयोडीन निश्चित रूप से प्राप्त हो जायेगा। सामान्यतः एक मनुष्य प्रतिदिन 10 से 15 ग्राम नमक का प्रयोग करता है। नमक में इतना आयोडीन मिलाया जाना चाहिये कि वह प्रतिदिन 300 से 500 मिलीग्राम आयोडीन प्राप्त कर सके। नमक में 0·2 प्रतिशत पोटैशियम आयोड़ेट मिलाने में यह आवश्यकता पूरी हो जाती है। पहले इस आयोडिनी-

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करण के लिये पोटैशियम आयोडाइड का प्रयोग किया जाता था। परन्तु अब पोटैशियम आयोडेट मिलाया जाता है, क्योंकि यह पदार्थ अधिक समय तक स्थायी रूप से संचित रहता है।

विश्व स्वास्थ्य संगठन की सहायता से भारतवर्ष में नमक को आयोडिनीकृत करने का प्रबन्ध किया गया है। राजस्थान के साम्भर नामक स्थान में, जहाँ से कि बहुत अधिक मात्रा में नमक का उत्पादन किया जाता है, नमक को आयोडिनीकृत करने का प्लाण्ट लगाया गया है। यहाँ प्रतिवर्ष 32000 टन नमक को आयोडिनीकृत किया जा सकता है। इस समय उत्तरप्रदेश, पंजाब और हिमाचल प्रदेश में आयोडिनीकृत नमक जनता को दिया जा रहा है। ऐसा प्रबन्ध करने की योजना है कि गलगण्ड वाले अन्य प्रदेशों— असम और अन्य उत्तर पूर्वी राज्यों में भी आयोडिनीकृत नमक की पूर्ति की जा सके।

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट—I

खनिजों और विटामिनों की सिफारिशी दैनिक मात्रायें

पदार्थ का नाम	अवस्था	मात्रा
कैल्सियम	बालक 0 से 10 वर्ष	1·5 ग्राम
	किशोर 11 से 15 वर्ष	1·2 ग्राम
	वयस्क स्त्री व पुरुष	1·0 ग्राम
	स्त्री गर्भावस्था	1·5 ग्राम
	स्त्री दूध पिलाने की अवधि	2·0 ग्राम
फॉस्फोरस	सामान्यत: सभी के लिये	0·88 ग्राम
लोह	बालक 0 से 10 वर्ष	·–7 मिलीग्राम
	किशोर 11 से 15 वर्ष	10–12 मिलीग्राम
	वयस्क स्त्री व पुरुष	10·00 मिलीग्राम
	स्त्री–रजःस्राव एवं गर्भ की अवस्था	12–15 मिलीग्राम
आयोडीन	सामान्यत: सभी के लिये	0·15 से 0·3 मिलीग्राम
विटामिन A	एक वर्ष तक का शिशु	1500 यूनिट
	4–5 वर्ष तक का शिशु	2500 यूनिट
	9–10 वर्ष तक का शिशु	3000–4000 यूनिट
	वयस्क पुरुष और स्त्री	5000 यूनिट
	स्त्री–गर्भावस्था	6000–7000 यूनिट
	स्त्री–दूध पिलाने की अवधि	8000 यूनिट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन D	सामान्यतः सभी के लिये	400–800 यूनिट
विटामिन E	सामान्यतः सभी के लिये	25–30 मिलीग्राम
विटामिन B_1	शिशुओं और बालकों के लिये	0·5–1·00 मिलीग्राम
	वयस्क स्त्री-पुरुषों के लिये	1·00– ·00 मिलीग्राम
विटामिन B_2	शिशुओं के लिये	0·7–1·2 मिलीग्राम
	किशोरों के लिये	1·2–1·7 मिलीग्राम
	वयस्क पुरुषों के लिये	1·3–2·2 मिलीग्राम
	वयस्क स्त्रियों के लिये	1·0–1·7 मिलीग्राम
	स्त्री–गर्भावस्था	1·2–1·9 मिलीग्राम
	स्त्री–दूध पिलाने की अवधि	1·4–2·1 मिलीग्राम
निकोटिनिक अम्ल	शिशुओं के लिये	8–14 मिलीग्राम
	किशोरों के लिये	14–21 मिलीग्राम
	वयस्क पुरुषों के लिये	16–26 मिलीग्राम
	वयस्क स्त्रियों के लिये	13–20 मिलीग्राम
	स्त्री–गर्भावस्था	15–22 मिलीग्राम
	स्त्री–दूध पिलाने की अवधि	18–25 मिलीग्राम
पैन्टोथीनिक अम्ल	सामान्यतः सभी के लिये	3–4 मिलीग्राम
विटामिन B_6	शिशुओं के लिये	0·3 मिलीग्राम
	वयस्कों के लिये	2·0 मिलीग्राम
फोलिक अम्ल	सामान्यतः सभी के लिये	0·5 से 1·00 मिलीग्राम
कोलिन	सामान्यतः सभी के लिये	1·5 से 3·00 मिलीग्राम
विटामिन B_{12}	सामान्यतः सभी के लिये	1·00 मिलीग्राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विटामिन C	शिशु एवं किशोर के लिये	30–50 मिलीग्राम
	वयस्क स्त्री और पुरुषों के लिये	50 मिलीग्राम
	गर्भावस्था एवं दूध पिलाने की अवधि के लिये	100 मिलीग्राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

परिशिष्ट–II

कुछ भोजन-पदार्थों के पोषणात्मक मूल्य

100 ग्राम पदार्थ में पोषक तत्व

संख्या	भोजन-पदार्थ	कैलोरी	प्रोटीन ग्राम	वसा ग्राम	कैल्सियम मिलीग्राम	लोह मिलीग्राम	विटामिन A यूनिट	विटामिन B_1 मिलीग्राम	विटासिन B_2 मिलीग्राम	नियासिन मिलीग्राम	विट मिन C मिलीग्राम
1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
अनाज											
1.	बाजरा	361	11·6	5·0	42	13·3	220	0·33	0·16	3·2	0
2.	चोलम	349	10·4	1·9	25	5·8	79	0·37	0·28	2·8	0
3.	मक्का	342	11·1	3·6	10	2 0	150	0·42	0·10	1·4	0
4.	जई	374	13·3	7·6	50	3·8	0	0·98	...	1·1	...
5.	रागी	328	7·3	1·3	344	17·4	70	0·42	0·10	1·1	0

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

6.	चावल (मिल का कुटा कच्चा)	345	6·8	0·3	10	3·1	0	0·06	0·06	1·9	0
7.	चावल (मिल का कुटा आधा उबला)	345	6·4	0·4	9	4·0	0	0·21	0·09	3·8	0
8.	चावल (हाथ का कुटा)	346	6·6	1·2	20	20	0	0·21	0·05	4·0	0
9.	सूजी	348	10·4	0·8	16	1·6	...	0·12	...	1·2	...
10.	गेहूं	346	11·8	1·5	41	4·9	108	0·45	0·12	5·0	0
11.	गेहूं का आटा सम्पूर्ण	341	12·1	1·7	48	11·5	49	0·49	0·29	4·3	0
12.	मैदे की डबल रोटी	245	7·8	0·7	11	1·1	...	0·07	...	0·7	...
	दालें										
13.	सफेद चना (सम्पूर्ण)	360	17·1	5·3	202	10·2	316	0·30	0·31	2·1	3
14.	सफेद चना (दाल)	372	20·8	5·6	56	9·1	216	0·48	0·18	2·4	1
15.	उड़द (दाल)	346	24·0	1·4	154	9·1	64	0·42	0·37	2·0	0
16.	चावली	333	24·6	0·7	70	3·8	20	0·41	0·85	...	0
17.	सेम के बीज	347	24·9	0·8	60	2·7	0	0·52	0·16	1·8	0

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
18.	मूंग (साबुत)	334	24·0	1·3	124	7·3	158	0·47	0·39	2·1	1
19.	मूंग की दाल	348	24·5	1·2	75	8·5	83	0·72	0·15	2·4	0
20.	कुलथी	321	22·0	0·5	287	8·4	119	0·42	0·20	1·5	1
21.	मसूर	343	25·1	0·7	69	4·8	450	0·45	0·49	1·5	0
22.	अरहर	335	22·3	1·7	73	5·8	220	0·45	0·51	2·6	0
23.	मूंगफली की खल	386	40·9	7·4	213	...	...	...	...	...	...
24.	पापड़	288	18·8	0·3	80	17·2	0	लेशमात्र	...	...	0
	तिलहन और मेवे										
25.	बादाम	655	20·8	58·9	230	4·5	0	0·24	0·15	2·5	0
26.	काजू	596	21·2	46.9	50	5·0	100	0·63	0·19	2·1	0
27.	नारियल गिरी सूखी	662	6·8	62·3	400	2·7	0	0·08	0·09	0·6	7
28.	तिल	563	18·3	43·3	1450	10·5	100	1·01	0 11	4 4	0
29.	मूंगफली दाना	549	26·7	40·1	50	1·6	63	0·90	0·30	14·1	0
30.	मूंगफली दाना (भुना)	561	31 5	39·8	50	0·3	0	0·39	0·13	8·6	0

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फल

31.	आंवला	58	0·5	0·1	50	1·2	15	0·13	0·01	0·2	600
32.	सेव	55	0·3	0·1	9	1·0	0	0·12	0·03	0·2	2
33.	केला	104	1·1	0·1	10	0·5	124	0·05	0·17	0·3	6
34.	गूजबेरी	53	1·8	0·2	10	2·0	2380	0·05	0·02	0·3	49
35.	काजूफल	51	0·2	0·1	10	2·2	39	0·02	0.05	0·4	180
36.	अंगूर	32	0·7	0·1	20	0·2	...	0·12	0·02	0·3	31
37.	अमरूद	51	0·9	0·3	10	1·4	0	0·03	0·03	0·4	212
38.	कटहल	88	1·9	0·1	20	0·5	292	0·03	0·13	0·4	7
39.	नीबू का रस	...	...	...	...	2·2	...	0·02	0·0	0·1	63
40.	मौसमी	43	0·8	0·3	40	0·7	0	...	...	0	50
41.	आम (पका हुआ)	51	0·6	0·1	10	0·3	4800	0·04	0·05	0·3	13
42.	खरबूजा	25	0·6	0·1	65	1·3	450	0·11	0·08	0·5	32
43.	सन्तरा	53	0·9	0·3	50	0·1	326	0·12	0·06	0·3	68
44.	पपीता	32	0·6	0·1	17	0·5	110	0·04	0·25	0·2	57
45.	अनन्नास	46	0·4	0.1	20	1·2	30	0·20	0·12	0·1	39
46.	चकोतरा	44	0·6	0·1	30	0·3	200	0·03	0·13	0·2	20

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
47.	चीकू	110	0·8	1·9	31	0·1	117	...	...	0·1	6
48.	इमली का गूदा	283	3·1	0·1	170	0.9	100	0·06	...	0·7	3
49.	टमाटर (पका हुआ)	20	0·9	0·2	48	0·4	585	0·12	0·06	0 4	27
सब्जियां											
50.	पेठा	10	0·4	0·1	30	0·8	0	0·06	0·01	0·4	31
51.	करेला	25	1·6	0·2	20	1·8	210	0·07	0·09	0·5	11
52.	बैंगन	24	1·4	0 3	18	0 9	124	0·04	0·11	0·9	12
53.	लौकी	12	0·2	0·1	20	0·7	0	0·03	0·01	0·2	6
54.	सेम की फली	48	4·5	0·1	50	1·4	16	0·08	...	0 8	12
55.	गोभी का फूल	30	2·6	0·4	33	1·5	51	0·04	0·10	1·0	56
56.	ग्वार की फली	60	3·2	0·4	130	4·5	330	0·09	0·03	0 6	49
57.	ककड़ी	13	0·4	0·1	10	1·5	0	0·03	0·01	0·2	7
58.	फ्रांसबीन	26	2·5	0·1	30	1·7	221	0·08	0·06	0·3	14
59.	लालमिर्च	25	1·7	0·1	50	1·2	712	0·55	0·05	0	137
60.	हरा पपीता	29	0·9	0·1	34	...	...	...	...	...	...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

61.	हरा कटहल	51	2·6	0·3	30	1·7	0	0·05	0·04	0·2	14
62.	भिण्डी	35	1·9	0·2	66	1·5	88	0·07	0·10	0·6	13
63.	हरी मटर	93	7·2	0·1	20	1·5	139	0·25	0·01	0 8	9
64.	कद्दू	25	1·4	0·2	10	0·7	84	0·06	0·04	0·5	2
65.	तौरी	17	0·5	0·1	40	0·6	56	0·07	0·01	0·2	5
66,	चचींडा	18	0·5	0·3	50	1·1	160	0·04	0·06	0·3	0
मूल और कन्द											
67.	चुकन्दर	43	1·7	0·1	27	1·0	0	0·04	0·09	0·4	10
68.	गाजर	48	0·9	0·2	80	2·2	3150	0·04	0·02	0·6	3
69.	अरबी	97	3·0	0·1	40	1·7	40	0·09	0·03	0·4	0
70.	प्याज	49	1·2	...	180	0·7	0	0·08	0·01	0·4	11
71.	आलू	97	1·6	0·1	10	0·7	40	0·10	0·01	1·2	17
72.	मूली	17	0·7	0·1	50	0·4	5	0·06	0·02	0·5	15
73.	शकरकन्दी	120	1·2	0·3	20	0·8	10	0·08	0·04	0·7	24
74.	टेपिओका	157	0·7	0·2	50	0·9	...	0·05	0·10	0·3	25
75.	रतालू	79	1·2	0·1	50	0·6	434	0·06	0·07	0·7	0

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
	पत्ते वाली सब्जियाँ										
76.	चौलाई	46	4·0	0·5	397	25·5	9200	0·03	0·10	1·0	99
77.	बन्दगोभी	27	1·8	0·1	39	0·8	2000	0·06	0 03	0·4	124
78.	अरबी के पत्ते	56	3·9	1·5	227	10·0	17130	0·22	0·26	1·1	.2
79.	मेथी के पत्ते	46	4·4	0·9	395	16·5	3900	0·04	0·16	0·8	52
80.	प्याज के पत्ते	33	1·2	0·8	78	...	...	...	...	...	...
81.	मूली के पत्ते	30	2·7	0·6	310	16·1	18660	0·03	0·16	0·3	103
82.	पालक	26	2·0	0·7	73	10·9	9330	0·03	0·07	0·5	28
	दूध और दूध के पदार्थ										
83.	गाय का दूध	67	3·2	4·1	120	0·2	184	0·05	0·19	0·1	2
84.	भैंस का दूध	117	4·3	8·8	210	0·2	160	0·04	0·10	0·1	1
85.	बकरी का दूध	62	3·3	4·5	170	0·3	182	0·04	0·12	0·3	1
86.	दूध-मानव	65	1·1	3·4	28	0·1	137	0·02	0·02	...	3
87.	दही (गाय के दूध की)	67	3·2	4·0	149	0·3	184	0·05	0·19	9·1	1
88.	खोआ (गाय के दूध का)	413	20·1	25·9	956	...	497	0·24	0·41	0·4	...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

89. सपरेटा दूध का चूर्ण (गाय का)	357	38·0	0·1	1370	1·4	0	0·45	1·64	1·0	5
90. दूध का चूर्ण (गाय का)	496	25·8	26·7	950	0·6	1400	0·31	1·36	0·8	4
अण्डा, मछली और माँस										
91. मुर्गी का अण्डा (दो)	113	13·3	13·3	60	2·1	2200	0·10	0·18	0·1	0
92. हिल्सा मछली	273	21·8	19·8	180	2·1	...	...	...	0·8	...
93. मंगलौर मछली	96	22·6	0·6	20	0·9	35	0·10	...	2·5	...
94. पोमफ्रेट मछली	87	17·0	1·3	31	0·9	...	...	0·5ɔ	2·6	...
95. गोमांस (पेशी)	114	22·6	2·6	10	0·8	60	0·15	0·04	6·4	2
96. भेड़-बकरी का मांस (पेशी)	194	18·5	13·3	9	2·5	31	0·14	0·27	6·8	...
97. सूअर का मांस (पेशी)	114	18·7	4·4	30	2·2	0	0·54	0·09	2·8	2
98. झींगे का मांस (पेशी)	86	20·8	0·3	90	0·8	0	0·01	0·10	4·8	0
99. भेड़ का यकृत	150	19·3	7·5	10	6·3	22300	0·36	1·60	17·6	20
100. मुर्गी का मांस	109	25·9	0·6	25	...	...	...	...	...	...

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12
	वसायें										
101.	मक्खन	729	...	81	...	...	3200	...	...	...	...
102.	घी	828	...	92	...	...	2000	...	...	...	...
103.	वनस्पति तेल	900	...	100	...	...	...	...	...	...	...
104.	जमाया हुआ वनस्पति तेल	900	...	100	...	...	मिलाये गये के अनुसार	...	...	...	...
	मछली का तेल										
105.	काड मछली का तेल	900	...	100	...	...	6000 से 200000	...	...	...	...
106.	हैलीबुट मछली का तेल	900	...	100	...	...	30 लाख	...	...	...	...
107.	शार्क मछली का तेल	900	...	100	...	...	2 लाख	...	...	...	=
	अन्य कुछ पदार्थ										
108.	अरारोट का आटा	344	0·2	0·1	10	1	...	...	...	...	...
109.	पान का पत्ता	44	3·1	0·8	230	7	9600	0·07	0·03	0·7	5
110.	नारियल का पानी	22	0·1	0·1	20	0·1	0	...	...	0·3	2

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

111.	गुड़	383	0·4	0·1	80	11·4	280	0·02	...	1·0	0
12.	चीनी	398	0·1	...	12	...	...	...	...	...	...
113.	साबूदाना	351	0·2	0·2	10	1·3	0	0·01	...	0·2	...
114.	ब्रेवर का सूखा पीस्ट	320	39·5	0·6	440	43·7	110	6·0	4·0	40·0	...
115.	धनिये के बीज	288	14·1	16·1	630	17·9	1570	0·22	0·35	1·1	0
116.	जीरे के बीज	356	18·7	15·0	1080	31·0	870	0·55	0·36	2·6	3
117.	मेथी के बीज	333	26·2	5·8	160	14·1	160	0·34	0·29	1·1	0
118.	अजवायन के बीज	363	17·1	21·8	1·25	27·7	119	0·21	0·28	2·1	...
119.	हरीमिर्च	29	2·9	0·6	30	1·2	[illegible]92	0·19	0·39	0·9	111

नोट—1. जमाये हुये वनस्पति तेलों में सरकारी कानून के अनुसार 700 यूनिट विटामिन A प्रति आउन्स मिलाना अनिवार्य है। इसमें विटामिन D भी मिलाते हैं। अतः इन तेलों में मिलाये गये के अनुसार विटामिन A और D होगा।

2. मछलियों के तेलों में विटामिन D की भी प्रचुर मात्रायें होती हैं, जो इस प्रकार है—

काड मछली का तेल = 10000 यूनिट प्रति 100 ग्राम

हेलीबूट मछली का तेल = 1200000 यूनिट प्रति 100 ग्राम

शार्क मछली का तेल 10000 यूनिट प्रति 100 ग्राम

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट–III

सन्दर्भ पुस्तकें

1. विटामिन और हीनताजनित रोग — **डा० सुरेन्द्रनाथ गुप्त**
   अवध पब्लिशिंग हाउस (1957 ई०)
2. स्वास्थ्य के लिये शाक-तरकारियाँ — **कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय**
   महेन्द्र रसायनशाला इलाहाबाद (1950)
3. स्वास्थ्य और रोग — **त्रिलोकीनाथ वर्मा**
   इलाहाबाद (1933 ई०)
4. स्वास्थ्य विज्ञान — **मुकुन्द स्वरूप वर्मा**
   हिन्दी प्रकाशन मण्डल, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय (1948 ई०)
5. आहार — **कविराज लक्ष्मी नारायण शर्मा**
   प्राणाचार्य भवन, विजयगढ़, अलीगढ़ (1952)
6. आहार और स्वास्थ्य — **डा० हीरालाल**
   नीरोगी ग्रन्थमाला, प्राकृतिक चिकित्सालय मगरवारा, उन्नाव (1959)
7. आरोग्य विधान — **जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल**
   सुधानिधि कार्यालय प्रयाग (2013 वि०)
8. Nutrition in India — **Dr. V. N. Patwardhan**
   The Indian Journal of Medical Sciences, Bombay (1952)
9. Vitamines — **Leslie J. Harris**
   J. & A. Churchill Ltd. London (1951)
10. Materia Medica of India & their therapeutics — **Rustomjee Naserwanjee Khory**
    Bombay (1903)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

11. Health and Longevity — **A. C. Selmout**
The Oriental Watchman Publishing House, Poona

12. Diet Does It — **Gayelord Hauser**
Faber and Faber, London

13. Miracles of Fruits — **Kaviraj Ganpati Singh Verma**
The Rasayan Pharmacy, Delhi (1962)

14. Handbook of Hygiene and Public Health — **Yashpal Bedi**
Anand Publishing Company, Amritsar (1962)

15. A Treatise on Hygiene and Public Health — **B. N. Ghosh**
Scientific Publishing Company, Calcutta (1959)

16. Diet and Nutrition — **Rudolph Balbutine**
The Himalayan International Institute, Pennsylvania, U. S. A. (1978)

17. A Text book of Biochemistry — West and Todd, (1973)

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट–IV

पारिभाषिक शब्दावली

हिन्दी–अंग्रेजी

हिन्दी	अंग्रेजी
अकार्बनिक	inorganic
अंगघात	paralysis
अण्डश्वेत	egg white
अण्डश्वेतक्षतिरोधी कारक	anti-white injury factor
अतिसार	diarrhoea
अधिवृक्क ग्रन्थि	suprarenal gland
अनिवार्य	essential
अनुक्रिया	response
अनैच्छिक	involuntary
अनैच्छिक क्रिया	involuntary action
अन्तस्त्वक्	subcutaneous
अपक्षय	digeneration
अपचय	reduction
अपसामान्य	abnormal
अम्ल समाक्षार सन्तुलन	acid-base balance
अवक्षेपण	deposition
अवटु ग्रन्थि	thyroid gland
अवरोधात्मक कामला	obstructive jaundice
अवशोषण	absorption
अरक्तता	anaemia
अरुचि	anorexia
अस्थि	bone
अस्थि आवरण	periosteum
अस्थिकर्बुरण	bony fluorosis
अस्थिकल्प	ostoid tissue
अस्थिमृदुता	ostomalacia
आतंचन	coagulation, clotting

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परिशिष्ट – IV

आतंचन विटामिन	coagulation vitamin
आन्तरिक अंग	internal organ
आयोडिनीकृत	iodized
उत्तेजनशीलता	irritability
उत्प्रेरक	catalytic agent
उत्सर्जन	excretion
उपकला	mucus membrane
उपचय	oxidation
उपापचय	metabolism
ऊष्मांक	calory
एमाइन	amine
एमिनो अम्ल	amino acid
कार्बनिक	organic
कार्बोहाइड्रेट	carbohydrate
किरणीयन	irradiation
केशिका	capillary
कैरेटिनीकरण	keratinisation
कैरेटोसिस	keratosis
कैल्सीभवन	calcification
कोलेस्टेरोल	cholesterol
कोशिका	cell
क्षतिपूर्ति	repair
खनिज	mineral
गलगण्ड	goitre
गलगण्ड उत्पादक	goitrogenic
गुल्फ	ankle
गेहूं अंकुर	wheat germ
ग्रासनली	oesophagus
चूजा	chick
जनन मूत्रपथ	genito-urinary tract
जमना	clotting
जल	water
जलविलेय	water soluble
जलसन्तुलन	water balance
जानु	knee

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तन्त्रिका	nerve
तन्त्रिका अवयव	nervous tissue
तन्त्रिकाशोथ	neuritis
तन्त्रिकाशोथरोधी	antineuritic
तन्त्रिका संस्थान	nervous system
तन्द्रा	drowsiness
त्वचाशोथरोधी	antidermatitis
दन्तकर्बुरण	dental fluorosis
दन्तक्षय	dental caries
दुष्ट अरक्तता	pernicious anaemia
दुष्पोषण	malnutrition
दृष्टिपटल	retina
धमनी	artery
न-अनिवार्य	non-essential
नियमित करना	to regulate
निर्विषीकरण	detoxication
पराबैंगनी	ultraviolet
परावटु	parathyroid
परासरण दाब	osmotic pressure
परिसरीय	peripheral
पर्शुका	rib
पलकों की शोथ	blepheritis
पाण्डु	jaundice
पारगम्यता	permeability
पूरोवर्ती	precursor
पेलाग्रा	pellagra
पेलाग्रा रोधी कारक	pellagra preventive factor
पेशी	muscle
पोषण	nutrition
पोषणात्मक	nutritive
प्रकल्पन	preperation
प्रकाशभीति	photophobia
प्रतिजीवी	antibiotic
प्रमस्तिष्क मेरु तरल	cerebrospinal fluid
प्रोटीन	protien

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्लीहा	spleen
फुफ्फुस	lung
बहुतन्त्रिका शोथ	polyneuritis
बेरी-बेरी	beri-beri
भारतीय चिकित्सा अनुसंधान संस्था	Indian Council of Medical Research
मतली	nausea
मूत्राश्मरी	urinary calculus
मदचक्र	menstrual cycle
मनोभ्रंश	dementia
मल	waste products
मस्तिष्क	brain
माइक्रोग्राम	*ug*.
मेरुतरल	spinal fluid
यकृत	liver
यीस्ट	yeast
वनस्पतिज	vegetable
वन्ध्यता	sterility
वन्ध्यतारोधी	antisterility
वमन	vomitting
वसा	fat
वसानियन्त्रक	lipotropic factor
वसाविलेय	fat soluble
वाइटामिन	vitamine
वाष्पित	evoporated
वाहिनी	duct
विटामिन	vitamin
विरञ्जन	bleaching
विश्व स्वास्थ्य संस्थान	World Health Organisation
वृद्धि प्रेरक	growth promoting
रक्त	blood
रक्त कणिका	blood cell
रक्तस्राव	hoemorrhage
रञ्जकता	pigmentation
रतौंधी	night blindness

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रात्र्यन्ध्यता	night blindness
राष्ट्रीय गलगण्ड योजना	National Goitre Project Plan
रुधिर	blood
रोग निरोधक तत्व	antibodies
रोग प्रतिरोधक क्षमता	immunity
लसीका	lymph
लोहहीनताजन्य अरक्तता	iron defficiency anaemia
शरीर की प्रक्रियायें	functions of the body
शरीर के तरल	body fluids
शरीर निर्माता	body building
शुष्क अक्षिपात	xerophthalmia
शोफ	anasarca
शोष	marasmus
श्वसन पथ	respiratory tract
सक्रियता	activity
संकुचन	contraction
संक्रमण	infection
सन्धि	joint
सम्पूरित	supplemented
संयोजी ऊतक	connective tissue
संवेदी	sensitive
संरक्षी भोजन	protective food
संश्लेषण	synthesis
सहायक कारक	accessary factor
सुषुम्ना	spinal cord
सूखा रोग	rickets
सूखा रोगरोधी	antiricketic
स्कर्वी	scurvy
स्नेहक तरल	synovial fluid
स्वच्छ मण्डल	conjunctiva
स्वच्छ मण्डलशोथ	conjunctivitis
स्वर-यन्त्र	larynx

———

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

87182

Checked
Any Other
Kosh 15-5-85
Kosh 18/7/85
Kosh 17/7/85

SAMPLE STOCK VERIFICATION

SAMPLE STOCK VERIFICATION
1988
VERIFIED BY

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar